मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

RNI No.: MPBIL/2001/05256
DAVP Code : 128101
Postal Registration No. : Bhopal/MP/581/2021-2023

Publish Date : Every Month Dt. 05
Posting Date : Every Month Dt. 15
Rs. 10/-

जगत विज़न

| वर्ष : 27 | अंक : 01 | सितंबर 2026 |

मोदी सरकार के दौरान हुए जन आंदोलन...

लोकतंत्र, असहमति और जनभागीदारी का बदलता स्वरूप

प्रेरणा स्त्रोत : स्व. श्री जगत पाठक

निर्भीक पत्रकारिता

संपादक विजया पाठक
कार्यकारी संपादक समता पाठक
पश्चिम बंगाल ब्यूरो चीफ अमित राय

सम्पादकीय एवं विज्ञापन कार्यालय

भोपाल

एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल
मो. 98260-64596, मो. 9893014600
फोन : 0755-4299165 म.प्र. स्वत्वाधिकारी,

छत्तीसगढ़

4-विनायका विहार, रिंग रोड, रायपुर

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक

विजया पाठक द्वारा जगत प्रिंटर्स पब्लिशर्स, खसरा नं. 1/1/6 अमरावद खुर्द बरखेड़ा पठानी, फंदा भोपाल से मुद्रित एवं एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. से प्रकाशित संपादक विजया पाठक। समस्त विवादों का कार्यक्षेत्र भोपाल सत्र-न्यायालय रहेगा। पत्रिका में प्रकाशित किये जाने वाले संपूर्ण आलेख एवं सामग्री की जिम्मेदारी लेखक एवं संपादक की होगी।

E-mail : jagat.vision@gmail.com
Website: www.jagatvision.co.in

(पृष्ठ क्र.-6)

- एथनाल पेट्रोल ने चीनी का बढ़ाया संकट 45
- देश में उगती विदेशी सभ्यता की दुकानें 48
- वैश्विक स्वास्थ्य क्रांति का नया अध्याय? 52
- शासन-प्रशासन के भरोसे ही क्यों? हर व्यक्ति को निभानी होगी अपने कर्तव्यों की जिम्मेदारी! 56
- क्रांति के भामाशाह अमरचंद बांठिया 59
- बीजेपी के वरिष्ठ नेताओं को साधने में नाकाम मोहन यादव 36
- छत्तीसगढ़ के 2161 करोड़ के शराब घोटाले में सनसनीखेज खुलासे 38
- Ram Temple embezzlement: How the Dalitbahujan see it 62

यह तो लेने के देने पड़ गए!
सरदार सरोवर बैठक
विजया :)

आखिर अपने हक के लिए सड़को पर क्यों उतर रहा युवा वर्ग?

मध्यप्रदेश में इन दिनों सड़कों पर उतरते लोगों की तस्वीरें बार-बार सामने आ रही हैं। कभी शिक्षक भर्ती के अभ्यर्थी रोजगार की मांग लेकर धरने पर बैठे दिखाई देते हैं, कभी वर्षों से सेवा दे रहे शिक्षक किसी नए आदेश के विरोध में प्रदर्शन करते हैं, कभी जूनियर डॉक्टर्स भी अपनी मांगों को लेकर और कभी कर्मचारी अपनी मांगों को लेकर काम बंद करने का रास्ता अपनाते हैं। लोकतंत्र में विरोध का अधिकार नागरिकों की ताकत है, लेकिन जब किसी व्यवस्था में अपनी बात कहने के लिए बार-बार सड़क का सहारा लेना पड़े, तो यह केवल आंदोलन का विषय नहीं रह जाता, बल्कि शासन-प्रशासन की कार्यप्रणाली पर भी गंभीर प्रश्न खड़े करता है। सबसे अधिक चिंता शिक्षा के क्षेत्र को लेकर उभर रही है। जिस विद्यालय में शिक्षक होना चाहिए, वहां शिक्षक के बजाय रिक्त पद और इंतजार दिखाई दे तो उसका असर सीधे बच्चों की पढ़ाई पर पड़ता है। दूसरी ओर, योग्य और चयनित अभ्यर्थी नियुक्ति की प्रतीक्षा में आंदोलन करने को विवश हों तो यह स्थिति और अधिक विडंबनापूर्ण हो जाती है। हाल के महीनों में शिक्षक भर्ती में पद बढ़ाने, नियुक्ति आदेश जारी करने और अन्य मांगों को लेकर अभ्यर्थियों के लगातार प्रदर्शन सामने आए हैं। कई बार आंदोलन के बाद कुछ निर्णय होते हैं, लेकिन मूल समस्या का स्थायी समाधान नहीं हो पाता।

यह सवाल केवल शिक्षक या शिक्षक बनने की तैयारी कर रहे युवाओं का नहीं है। इसके केंद्र में प्रदेश की शिक्षा व्यवस्था और लाखों विद्यार्थियों का भविष्य है। यदि स्कूलों में पर्याप्त शिक्षक नहीं होंगे, तो कितनी भी योजनाएं, डिजिटल सुविधाएं और भवन निर्माण के दावे किए जाएं, शिक्षा की गुणवत्ता का लक्ष्य अधूरा ही रहेगा। इसलिए शिक्षक भर्ती को केवल रोजगार उपलब्ध कराने की प्रक्रिया मानना उचित नहीं होगा। यह प्रदेश के भविष्य में निवेश का विषय है। विरोध का दूसरा पहलू भी उतना ही महत्वपूर्ण है। सरकार और प्रशासन के सामने आने वाली हर मांग को स्वीकार करना संभव नहीं हो सकता। वित्तीय सीमाएं, नियम-कायदे और प्रशासनिक प्राथमिकताएं अपने स्थान पर हैं। लेकिन असहमति का समाधान दमन या टालने से नहीं, संवाद से निकलता है। यदि कोई निर्णय हजारों कर्मचारियों या अभ्यर्थियों को प्रभावित करता है तो उसके पीछे की वजह स्पष्ट रूप से बताना, उनकी आपत्तियां सुनना और समयबद्ध समाधान की दिशा में आगे बढ़ना सरकार की जिम्मेदारी है।

लगातार आंदोलन यह संकेत भी देते हैं कि शासन और समाज के बीच संवाद के स्थापित मंच पर्याप्त प्रभावी नहीं हैं। यदि प्रतिनिधिमंडल मिलने के बाद भी महीनों तक उत्तर नहीं मिलता, ज्ञापन के बाद भी निर्णय नहीं होता और आश्वासन की समय-सीमा समाप्त हो जाती है, तो स्वाभाविक रूप से असंतोष सड़क पर आता है। यही असंतोष धीरे-धीरे अविश्वास में बदल सकता है। मध्यप्रदेश जैसे बड़े राज्य में यह स्थिति नीति-निर्माताओं के लिए आत्ममंथन का अवसर है। हर आंदोलन को कानून-व्यवस्था की समस्या के रूप में देखने के बजाय उसके पीछे छिपे कारणों को समझना जरूरी है। शिक्षक नियुक्ति का मामला हो, अतिथि शिक्षकों की चिंता हो, परीक्षा और भर्ती से जुड़े प्रश्न हों या कर्मचारियों की सेवा संबंधी मांगें- इन सभी में एक साझा तत्व दिखाई देता है, वह है अपने भविष्य और अधिकारों को लेकर असुरक्षा। सरकार के लिए सबसे बेहतर रास्ता यही होगा कि वह लंबित मामलों की प्राथमिकता तय करे, विभागवार समय-सीमा निर्धारित करे और उसकी सार्वजनिक जानकारी उपलब्ध कराए। इससे अफवाहों और अनिश्चितता दोनों पर अंकुश लगेगा। साथ ही, ऐसे तंत्र को मजबूत करना होगा जहां कर्मचारी और अभ्यर्थी आंदोलन की नौबत आने से पहले अपनी बात प्रभावी ढंग से रख सकें।

सड़क लोकतंत्र की अंतिम आवाज नहीं, बल्कि संवाद का एक चेतावनी संकेत है। जब विद्यालय छोड़कर शिक्षक सड़क पर आते हैं, जब नौकरी की आस लगाए युवा धरने पर बैठते हैं और जब कर्मचारी काम रोककर अपनी बात कहते हैं, तब केवल नारों को नहीं, उन नारों के पीछे की बेचैनी को सुनने की आवश्यकता होती है। मध्यप्रदेश के विकास की वास्तविक कसौटी केवल नई परियोजनाएं और बड़े निवेश नहीं, बल्कि यह भी है कि उसके नागरिकों को अपनी जायज बात रखने के लिए कितनी बार सड़क पर उतरना पड़ता है। लोकतंत्र में सरकार और जनता आमने-सामने खड़ी शक्तियां नहीं हैं। दोनों एक ही व्यवस्था के दो पक्ष हैं। इसलिए जरूरी है कि आंदोलन समाप्त कराने से अधिक महत्व उस कारण को समाप्त करने को दिया जाए, जिसने आंदोलन को जन्म दिया।

विजया पाठक

मोदी सरकार के दौरान हुए जन आंदोलन...

लोकतंत्र, असहमति और जनभागीदारी का बदलता स्वरूप

■ विजया पाठक

देश की आजादी से लेकर मौजूदा परिस्थितियों तक आंदोलनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आंदोलन की शक्ति के आगे सब बौने साबित होते हैं। आजादी में आंदोलन ही सबसे बड़ी ताकत थी। सही मायने में आंदोलन की उपयोगिता एक बार फिर दिखने लगी है। 2014 से लेकर 2026 तक 12 सालों में मोदी सरकार के दौरान देश के अंदर विभिन्न मामलों को लेकर वृहद स्तर पर आंदोलन हुए हैं। इन आंदोलनों ने लोकतंत्र की नई परिभाषा को गढ़ा है और सरकार को झुकने तक को मजबूर किया। इन 12 वर्षो में सबसे ज्यादा आंदोलन हुए हैं। जो दर्शाते हैं कि मोदी सरकार के फैसलों से देश की जनता कहीं न कहीं नाराज है और जो फैसले लिए गये या जो नीतियां बनाई गई उनमें जनहित नहीं जुड़ा था। 2014 में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र में भारतीय जनता पार्टी की सरकार बनने के बाद भारतीय राजनीति में एक मजबूत केंद्रीय नेतृत्व का दौर शुरू हुआ। सरकार ने आर्थिक सुधार, कृषि, श्रम, रक्षा, नागरिकता, बुनियादी ढाँचे और प्रशासन से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिए। इन नीतियों ने जहाँ समर्थकों के बीच विकास और परिवर्तन की उम्मीद पैदा की, वहीं कई निर्णयों ने समाज के विभिन्न वर्गो में असंतोष भी पैदा किया। इस असंतोष ने समय-समय पर व्यापक जन आंदोलनों का रूप लिया। कहीं किसान सड़कों पर उतरे, कहीं छात्र और युवा, कहीं महिलाएँ, कहीं मजदूर और कहीं नागरिक अधिकारों के लिए संघर्षरत समूह। आंदोलनों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि समाज के हर वर्ग ने आंदोलन किये। वह चाहे युवा रहे हो, किसान रहे हों या व्यापारी रहे हों। इन आंदोलनों का स्वरूप, नेतृत्व और उद्देश्य अलग-अलग था, लेकिन इनके पीछे एक साझा लोकतांत्रिक तत्व था- सरकार के निर्णयों पर सवाल उठाना और अपनी मांगों को सार्वजनिक रूप से सामने रखना। मोदी सरकार के दौर के आंदोलनों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इनमें कुछ आंदोलन सरकार की नीतियों में बदलाव कराने में सफल हुए, जबकि कुछ अपने मूल उद्देश्य हासिल नहीं कर पाए। तीन कृषि कानूनों की वापसी इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। इसके विपरीत CAA-विरोधी आंदोलन और अग्निपथ आंदोलन सरकार को अपनी मूल नीतियों से पीछे हटाने में सफल नहीं हुए। मोदी सरकार के दौरान हुए जन आंदोलन भारतीय लोकतंत्र की जटिलता और जीवंतता दोनों को प्रतिबिंबित करते हैं। इन आंदोलनों में किसानों की चिंता है, युवाओं की रोजगार संबंधी बेचैनी है, महिलाओं की सार्वजनिक भागीदारी है, अल्पसंख्यकों की नागरिकता संबंधी आशंकाएँ हैं, दलितों के सामाजिक न्याय के प्रश्न हैं, खिलाड़ियों की संस्थागत जवाबदेही की मांग है और श्रमिकों की रोजगार सुरक्षा की चिंता है। इनमें से कुछ आंदोलनों ने सरकार को अपने निर्णय बदलने पर मजबूर किया। जंतर-मंतर पर युवाओं का आंदोलन और किसान आंदोलन इसका सबसे उल्लेखनीय उदाहरण हैं। तीनों कृषि कानूनों की वापसी ने यह दिखाया कि लंबे समय तक चलने वाला व्यापक जन दबाव लोकतांत्रिक सरकार के नीति-निर्णय को प्रभावित कर सकता है। सरकार ने स्वयं नवंबर 2021 में कानून वापस लेने की घोषणा की और संसद ने बाद में उन्हें निरस्त किया। दूसरी ओर CAA विरोधी आंदोलन, अग्निपथ आंदोलन और Gen-z का आंदोलन यह दिखाते हैं कि हर जन आंदोलन का परिणाम कानून या नीति की वापसी नहीं होता। फिर भी ऐसे आंदोलन सामाजिक विमर्श को प्रभावित करते हैं और लोकतांत्रिक संस्थाओं से जवाबदेही की मांग को मजबूत करते हैं। मोदी सरकार के काल के जन आंदोलनों की सबसे महत्वपूर्ण सीख शायद यही है कि लोकतंत्र केवल चुनावों में व्यक्त होने वाली जनता की इच्छा का नाम नहीं है। जनता चुनावों के बीच भी अपनी आवाज उठाती है। वह सड़क पर उतरती है, धरना देती है, अदालत जाती है, सोशल मीडिया पर अभियान चलाती है, संसद पर दबाव बनाती है और कभी-कभी सरकार को अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए बाध्य करती है। भारत जैसे विशाल और

विविध लोकतंत्र में असहमति स्वाभाविक है। असहमति को दबाने के बजाय उसे सुनना, उसके पीछे की वास्तविक सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को समझना और संवाद के माध्यम से समाधान तलाशना लोकतांत्रिक शासन की परिपक्वता का संकेत है। दूसरी ओर आंदोलनकारियों के लिए भी यह आवश्यक है कि वे संवैधानिक मर्यादाओं, कानून और अन्य नागरिकों के अधिकारों का सम्मान करें। इसलिए मोदी सरकार के दौर के जन आंदोलनों को केवल सरकार विरोध या राजनीतिक साजिश की संज्ञा देकर समझना पर्याप्त नहीं है। ये आंदोलन भारतीय समाज के भीतर चल रहे गहरे बदलावों के संकेतक हैं। वे बताते हैं कि भारत का नागरिक समाज आज अधिक जागरूक, अधिक संगठित और तकनीकी रूप से अधिक सक्षम है। साथ ही वे यह भी बताते हैं कि आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय, नागरिक अधिकार और राष्ट्रीय हित के बीच संतुलन बनाना आने वाले वर्षों में भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक रहेगा। जनआंदोलन लोकतंत्र के लिए खतरा तभी बनते हैं जब संवाद समाप्त हो जाता है। जब संवाद बना रहता है, तब आंदोलन लोकतंत्र को कमजोर नहीं बल्कि अधिक उत्तरदायी बनाते हैं। किसान आंदोलन की सफलता, CAA आंदोलन की व्यापक सामाजिक बहस, अग्निपथ आंदोलन में युवाओं की बेचैनी और महिला तथा सामाजिक न्याय आंदोलनों की आवाज- ये सभी मिलकर आधुनिक भारत की लोकतांत्रिक कहानी का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुके हैं। इस अर्थ में मोदी सरकार का काल केवल मजबूत सरकार और बड़े नीतिगत फैसलों का काल नहीं है, यह मजबूत जनप्रतिरोध, नागरिक सक्रियता और लोकतांत्रिक असहमति का भी काल है। आने वाले समय में इन आंदोलनों का मूल्यांकन इस आधार पर किया जाएगा कि उन्होंने भारत के लोकतंत्र को किस हद तक अधिक सहभागी, जवाबदेह और संवेदनशील बनाया। जन आंदोलनों को केवल सरकार-विरोधी गतिविधि के रूप में नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक असहमति, नीति-निर्माण, सामाजिक पहचान, रोजगार, कृषि, नागरिकता और संस्थागत जवाबदेही से जुड़े व्यापक सामाजिक आंदोलनों के रूप में देखा गया है। भारत के लोकतंत्र में जन आंदोलन केवल विरोध का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे सत्ता और समाज के बीच संवाद की एक महत्वपूर्ण कड़ी भी हैं। 2014 के बाद नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र में बनी सरकार ने अनेक बड़े और तेज नीतिगत फैसले लिए। इनमें भूमि अधिग्रहण, कृषि सुधार, नागरिकता, सैन्य भर्ती और सामाजिक न्याय से जुड़े निर्णय प्रमुख थे। इन फैसलों में से कुछ के खिलाफ व्यापक जन विरोध हुआ और कुछ मामलों में सरकार को अपने निर्णय में बदलाव या पीछे हटना पड़ा। भारतीय राजनीति में इन दिनों एक दिलचस्प बदलाव दिखाई दे रहा है। अचानक युवा केवल भाषणों में देश का भविष्य नहीं रहा, वह राजनीतिक दलों के वर्तमान एजेंडे की प्राथमिकता बन गया है। सरकार कैंपस तक पहुँचने की रणनीति बना रही है, मंत्री विश्वविद्यालयों में युवाओं से संवाद कर रहे हैं। सोशल मीडिया की भाषा और अंदाज बदल रहा है, राज्यों में Gen-Z से सीधे जुड़ने के कार्यक्रम तैयार हो रहे हैं। विपक्ष भी शिक्षा, परीक्षा, रोजगार और युवा आकांक्षाओं को अपनी राजनीतिक रणनीति के केंद्र में ला रहा है। सवाल है- आखिर ऐसा अचानक क्यों? इसका एक बड़ा जवाब कुछ सप्ताह पीछे दिल्ली के जंतर-मंतर पर मिलता है। प्रतियोगी परीक्षाओं की गड़बड़ियों, पेपर लीक, रोजगार और जवाबदेही के सवालों पर खड़े हुए Gen-Z आंदोलन ने भले अपना धरना समाप्त कर दिया हो, लेकिन जाते-जाते उसने राजनीतिक दलों के सामने एक नया चुनावी सच रख दिया। इस पीढ़ी को नजरअंदाज करना अब आसान नहीं है। दरअसल भारतीय लोकतंत्र में यह पहली बार नहीं हुआ। यहाँ चुनाव सरकार बदलते हैं, लेकिन कई बार आंदोलन राजनीति की दिशा बदल देते हैं। सड़क पर उठी आवाज संसद तक पहुँचती है और फिर वही मुद्दा राजनीतिक दलों की भाषा, घोषणापत्र और चुनावी रणनीति का हिस्सा बन जाता है।

भारत को विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहा जाता है। लोकतंत्र का अर्थ केवल नियमित अंतराल पर चुनाव कराना नहीं है, बल्कि नागरिकों को अपनी बात कहने, सरकार की नीतियों पर प्रश्न उठाने, असहमति व्यक्त करने और शांतिपूर्ण ढंग से अपने अधिकारों तथा हितों की रक्षा के लिए संगठित होने का अवसर देना भी है। इस दृष्टि से जन आंदोलन लोकतांत्रिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। संसद और विधानसभाएँ जहाँ संस्थागत राजनीति का प्रतिनिधित्व करती हैं, वहीं जन आंदोलन समाज के उन वर्गों की आवाज सामने लाते हैं जिन्हें कभी-कभी औपचारिक राजनीतिक प्रक्रियाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता। 2014 में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी की सरकार बनने के बाद भारतीय राजनीति में एक नए दौर की शुरूआत हुई। 2019 में भाजपा को और अधिक बहुमत मिला और नरेंद्र मोदी दूसरी बार प्रधानमंत्री बने। 2024 में तीसरी बार केंद्र में मोदी सरकार बनी, हालांकि इस बार भाजपा को सरकार चलाने के लिए सहयोगी दलों के समर्थन की आवश्यकता पड़ी। इस पूरे दौर में सरकार ने आर्थिक सुधार, बुनियादी ढाँचे, डिजिटल अर्थव्यवस्था,

देश की आजादी से लेकर मौजूदा परिस्थितियों तक आंदोलनों का महत्वपूर्ण योगदान

कल्याणकारी योजनाओं, राष्ट्रीय सुरक्षा, श्रम सुधार, कृषि सुधार और प्रशासनिक बदलावों को आगे बढ़ाया। दूसरी ओर, इन्हीं नीतियों और कुछ सामाजिक राजनीतिक मुद्दों को लेकर देश के विभिन्न हिस्सों में अनेक जन आंदोलन भी हुए। इन आंदोलनों का स्वरूप एक जैसा नहीं था। कुछ आंदोलन विश्वविद्यालयों और युवाओं से जुड़े थे, कुछ महिलाओं और नागरिकता के प्रश्न पर केंद्रित थे, कुछ किसानों ने किए, कुछ बेरोजगार युवाओं ने, कुछ सामाजिक न्याय और आरक्षण से जुड़े थे और कुछ पर्यावरण, भूमि तथा स्थानीय अधिकारों के प्रश्न पर थे। कई आंदोलनों का सीधा संबंध

जनभागीदारी का बदलता स्वरूप, जन आंदोलनों ने गढ़ी लोकतंत्र की नई परिभाषा

केंद्र सरकार के किसी कानून या नीति से था, जबकि कुछ आंदोलन व्यापक सामाजिक परिस्थितियों से पैदा हुए। मोदी सरकार के काल के जन आंदोलनों का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इनमें भारतीय लोकतंत्र के कई विरोधाभासी और गतिशील पक्ष दिखाई देते हैं। एक ओर सोशल मीडिया, इंटरनेट और डिजिटल संचार ने आंदोलन खड़े करने की क्षमता को बढ़ाया, दूसरी ओर सरकार और आंदोलनकारियों के बीच टकराव, पुलिस कार्रवाई, कानूनी मामलों और राजनीतिक ध्रुवीकरण ने लोकतांत्रिक संवाद की सीमाओं को भी सामने रखा। कुछ

आंदोलनों ने सरकार को अपनी नीतियों पर पुनर्विचार करने के लिए बाध्य किया, जबकि कुछ आंदोलन राजनीतिक या कानूनी स्तर पर अपने मूल उद्देश्य हासिल

"लोकतंत्र, असहमति को लेकर मोदी सरकार के दौरान हुए जन आंदोलन"

नहीं कर सके। भारतीय राजनीति में इन दिनों एक दिलचस्प बदलाव दिखाई दे रहा है। अचानक युवा केवल भाषणों में देश का भविष्य नहीं रहा, वह राजनीतिक दलों के

Gen-Z आंदोलन

जंतर-मंतर पर युवाओं का आक्रोश

भारत की राजनीति में वर्ष 2026 का जंतर-मंतर आंदोलन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें एक ऐसी पीढ़ी सड़कों पर दिखाई दी जिसे आमतौर पर सोशल मीडिया, रील्स और डिजिटल संस्कृति से जोड़कर देखा जाता है। Gen-Z ने यह दिखाया कि डिजिटल दुनिया में सक्रिय होना राजनीतिक रूप से निष्क्रिय होना नहीं है। इसके विपरीत, सोशल मीडिया के माध्यम से संगठित होने वाली यह पीढ़ी जब जंतर-मंतर पहुँची तो उसने पारंपरिक धरना-प्रदर्शन की शैली को अपनी भाषा, व्यंग्य, मीम और डिजिटल संचार के साथ नया रूप दिया। इस आंदोलन का तत्काल कारण परीक्षा व्यवस्था से जुड़ी समस्याएँ- विशेषकर पेपर लीक, परीक्षा रद्द होने और परीक्षा प्रक्रिया की विश्वसनीयता पर उठे सवाल थे। लेकिन धीरे-धीरे आंदोलन का स्वरूप व्यापक हुआ और इसमें शिक्षा व्यवस्था, बेरोजगारी, सरकारी जवाबदेही और राजनीतिक नेतृत्व की जिम्मेदारी जैसे प्रश्न शामिल हो गए। जंतर-मंतर पर 2026 का Gen-Z आंदोलन भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ के रूप में देखा जा सकता है। इसकी शुरूआत परीक्षा और शिक्षा व्यवस्था से जुड़े असंतोष से हुई, लेकिन धीरे-धीरे यह युवा रोजगार, अवसर, पारदर्शिता और सरकार की जवाबदेही जैसे व्यापक प्रश्नों का आंदोलन बन गया। इस आंदोलन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी

वर्तमान एजेंडे की प्राथमिकता बन गया है। सरकार कैंपस तक पहुँचने की रणनीति बना रही है, मंत्री विश्वविद्यालयों में युवाओं से संवाद कर रहे हैं। सोशल मीडिया की भाषा और अंदाज बदल रहा है, राज्यों में Gen-Z से सीधे जुड़ने के कार्यक्रम तैयार हो रहे हैं। विपक्ष भी शिक्षा, परीक्षा, रोजगार और युवा आकांक्षाओं को अपनी राजनीतिक रणनीति के केंद्र में ला रहा है। सवाल है- आखिर

शक्ति किसी एक बड़े राजनीतिक नेता से नहीं, बल्कि डिजिटल रूप से जुड़े युवाओं के सामूहिक असंतोष से आई। युवाओं ने व्यंग्य और सोशल मीडिया की भाषा को सड़क के आंदोलन से जोड़ दिया। जंतर-मंतर इस नई राजनीतिक शैली का प्रत्यक्ष मंच बना। मोदी सरकार के लिए इसका संदेश स्पष्ट है। भारत की युवा पीढ़ी केवल रोजगार की तलाश में नहीं है; वह विश्वसनीय संस्थाएँ, निष्पक्ष परीक्षाएँ, पारदर्शी शासन और अपने भविष्य के प्रति जवाबदेही भी चाहती है। यदि इस आंदोलन को केवल सरकार-विरोधी राजनीति कहकर खारिज कर दिया जाए, तो इसके पीछे मौजूद वास्तविक युवा असंतोष को समझने का अवसर खो जाएगा। वहीं आंदोलन की स्थायी उपलब्धि तभी मानी जाएगी जब विरोध की ऊर्जा संस्थागत सुधार में बदले। इस अर्थ में जंतर-मंतर का Gen-Z आंदोलन केवल एक प्रदर्शन नहीं, बल्कि भारत की नई पीढ़ी का यह सवाल है- हमारे भविष्य का फैसला हमारे बिना क्यों? युवा आंदोलन का सबसे सकारात्मक पक्ष यह है कि इससे नई पीढ़ी राजनीति से जुड़ती है। लोकतंत्र में नागरिक भागीदारी केवल मतदान तक सीमित नहीं है। जब युवा अपने अधिकारों के लिए शांतिपूर्ण ढंग से प्रदर्शन करते हैं, ज्ञापन देते हैं, सार्वजनिक बहस करते हैं और सरकार से जवाब मांगते हैं, तब वे लोकतांत्रिक प्रक्रिया का सक्रिय हिस्सा बनते हैं। लोकतंत्र की दृष्टि से युवाओं का शांतिपूर्ण विरोध किसी भी सरकार के लिए खतरा नहीं, बल्कि समाज से मिलने वाला महत्वपूर्ण फीडबैक है। सरकार का दायित्व है कि वह ऐसी आवाजों को सुने और जहाँ वास्तविक समस्या हो वहाँ सुधार करे। दूसरी ओर आंदोलनकारियों का दायित्व भी है कि वे हिंसा और सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाने से बचें। मोदी सरकार के दौर में युवाओं की यह आवाज विशेष महत्व रखती है, क्योंकि भारत का भविष्य उन्हीं युवाओं के हाथ में है। यदि उनकी ऊर्जा को रोजगार, शिक्षा, कौशल और उद्यमिता के अवसर मिलते हैं, तो यही युवा भारत की सबसे बड़ी शक्ति बनेंगे। लेकिन यदि उनकी आकांक्षाएँ लगातार निराशा में बदलती हैं, तो जंतर-मंतर जैसे स्थानों पर उठने वाली आवाजें आने वाले वर्षों में और अधिक महत्वपूर्ण होती जाएँगी।

ऐसा अचानक क्यों? इसका एक बड़ा जवाब कुछ सप्ताह पीछे दिल्ली के जंतर-मंतर पर मिलता है। प्रतियोगी परीक्षाओं की गड़बड़ियों, पेपर लीक, रोजगार और जवाबदेही के सवालों पर खड़े हुए Gen-Z आंदोलन ने भले अपना धरना समाप्त कर दिया हो, लेकिन जाते-जाते उसने राजनीतिक दलों के सामने एक नया चुनावी सच रख दिया। इस पीढ़ी को नजरअंदाज

करना अब आसान नहीं है। दरअसल भारतीय लोकतंत्र में यह पहली बार नहीं हुआ। यहाँ चुनाव सरकार बदलते हैं, लेकिन कई बार आंदोलन राजनीति की दिशा बदल देते हैं। सड़क पर उठी आवाज संसद तक पहुँचती है और फिर वही मुद्दा राजनीतिक

अग्निवीर आंदोलन

अग्निपथ योजना और युवाओं का आंदोलन

जून 2022 में केंद्र सरकार ने सशस्त्र सेनाओं में भर्ती के लिए अग्निपथ योजना घोषित की। योजना के अनुसार युवाओं को चार वर्ष की अवधि के लिए अग्निवीर के रूप में सेना में भर्ती किया जाना था। सरकार ने इसे सशस्त्र सेनाओं को अधिक युवा, तकनीक- सक्षम और आधुनिक बनाने की दिशा में परिवर्तनकारी सुधार बताया। योजना के शुरूआती वर्ष में 46,000 अग्निवीरों की भर्ती का लक्ष्य घोषित किया गया था। लेकिन घोषणा के तुरंत बाद बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और तेलंगाना सहित कई राज्यों में युवाओं ने विरोध प्रदर्शन किया। आंदोलनकारियों की प्रमुख चिंताओं में चार वर्ष की सेवा अवधि, सीमित संख्या में स्थायी भर्ती और चार वर्ष बाद रोजगार की अनिश्चितता शामिल थी। कुछ स्थानों पर प्रदर्शन हिंसक हो गए। ट्रेनों और सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाया गया। सरकार ने बाद में आयु सीमा में एक बार की छूट सहित कुछ राहत की घोषणाएँ कीं। अग्निपथ आंदोलन की विशेषता यह थी कि इसका मुख्य आधार राजनीतिक दलों से अधिक बेरोजगार या सेना में भर्ती की तैयारी कर रहे युवा थे। यह आंदोलन भारतीय युवाओं की रोजगार संबंधी चिंता का एक महत्वपूर्ण संकेत था। सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया कि अग्निपथ योजना से सेना का औसत आयु-प्रोफाइल कम होगा और चार वर्ष की सेवा के बाद युवाओं के पास कौशल, अनुशासन तथा 'सेवा निधि' जैसी आर्थिक सहायता होगी। दूसरी ओर आंदोलनकारियों को आशंका थी कि लंबे समय से सेना की स्थायी भर्ती की तैयारी करने वाले युवाओं के लिए यह व्यवस्था रोजगार की सुरक्षा कम करेगी। इस प्रकार अग्निपथ आंदोलन केवल एक भर्ती योजना का विरोध नहीं था, इसके पीछे रोजगार, सरकारी नौकरियों की घटती उपलब्धता और युवाओं के भविष्य को लेकर व्यापक चिंता भी थी।

दलों की भाषा, घोषणापत्र और चुनावी रणनीति का हिस्सा बन जाता है। स्वतंत्र भारत का इतिहास ऐसी कई आग का साक्षी है। 1965 में तमिलनाडु का हिंदी-विरोधी आंदोलन भाषा और क्षेत्रीय अस्मिता के प्रश्न पर उभरा। छात्रों की बड़ी भागीदारी

किसान आंदोलन

मोदी सरकार के दौर का सबसे बड़ा जन आंदोलन

मोदी सरकार के कार्यकाल का सबसे व्यापक और प्रभावशाली जन आंदोलन 2020-21 का किसान आंदोलन था। सितंबर 2020 में संसद ने तीन कृषि कानून पारित किए। सरकार का उद्देश्य कृषि क्षेत्र में किसानों को अपनी उपज बेचने के लिए अधिक विकल्प देना, कृषि व्यापार को उदार बनाना और निजी निवेश को प्रोत्साहित करना बताया गया। तीन कानून थे- कृषक उपज व्यापार एवं वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) अधिनियम, 2020। कृषक (सशक्तीकरण एवं संरक्षण) कीमत आश्वासन

वाले इस आंदोलन के बाद 1967 में कांग्रेस का पुराना वर्चस्व टूटा और सी.एन. अन्नादुरै के नेतृत्व में डीएमके सत्ता में आई। आंदोलन ने केवल भाषा की बहस नहीं बदली, दक्षिण भारत की राजनीति का स्थायी समीकरण बदल दिया।

1974 में गुजरात का नवनिर्माण आंदोलन महंगाई और भ्रष्टाचार के खिलाफ छात्र असंतोष से शुरू हुआ। उसकी चिंगारी

और कृषि सेवा करार अधिनियम, 2020। आवश्यक वस्तु (संशोधन) अधिनियम, 2020। नवंबर 2020 में हजारों किसान दिल्ली की ओर बढ़े। दिल्ली की सीमाओं सिंघु, टिकरी और गाजीपुर पर लंबे समय तक धरने चले। आंदोलन एक साल से अधिक समय तक जारी रहा और देश के सबसे बड़े संगठित किसान आंदोलनों में बदल गया। नवंबर 2020 में पंजाब, हरियाणा और अन्य राज्यों से बड़ी संख्या में किसान दिल्ली की ओर बढ़े। दिल्ली की सीमाओं- विशेषकर सिंघु, टिकरी और गाजीपुर पर लंबे समय तक धरने चले। यह आंदोलन केवल किसानों का विरोध प्रदर्शन नहीं रहा, बल्कि उसने एक समानांतर सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था का रूप भी लिया। धरना स्थलों पर लंगर, पुस्तकालय, चिकित्सा केंद्र, मंच, मीडिया केंद्र और अन्य सुविधाएँ स्थापित की गईं। महिलाओं, बुजुर्गों और युवाओं की भागीदारी ने आंदोलन को व्यापक सामाजिक आधार दिया। किसान संगठनों ने अलग-अलग विचारधाराओं और क्षेत्रों के बावजूद एक साझा मंच बनाया। 26 जनवरी 2021 को किसानों द्वारा दिल्ली में ट्रैक्टर मार्च के दौरान कुछ स्थानों पर हिंसा और लाल किले पर धार्मिक ध्वज फहराए जाने की घटना ने आंदोलन को विवादित बनाया। सरकार ने इसे कानून-व्यवस्था की गंभीर समस्या बताया, जबकि किसान संगठनों ने बड़ी संख्या में शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों को इस घटना से अलग बताया। इस घटना के बावजूद आंदोलन समाप्त नहीं हुआ। सरकार का तर्क

बिहार पहुँची और जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में संपूर्ण क्रांति का विशाल आंदोलन खड़ा हुआ। आपातकाल और उसके बाद बने राजनीतिक वातावरण में 1977 में पहली बार केंद्र में गैर-कांग्रेसी सरकार बनी। जेपी आंदोलन ने बताया कि युवा किसी आंदोलन की संख्या भर नहीं, सत्ता परिवर्तन की भूमिका भी लिख सकता है। 1979 से 1985 का असम आंदोलन इससे आगे

था कि इन कानूनों से किसानों को मंडियों के बाहर भी अपनी उपज बेचने की स्वतंत्रता मिलेगी और प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी। किसान संगठनों का एक बड़ा हिस्सा इसके विपरीत आशंकित था कि इससे मंडी व्यवस्था कमजोर होगी, निजी कंपनियों की सौदेबाजी की शक्ति बढ़ेगी और भविष्य में न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की व्यवस्था प्रभावित हो सकती है। सरकार ने बार-बार कहा कि ग्च्छ व्यवस्था समाप्त नहीं की जा रही है। कृषि मंत्रालय और सरकार के प्रतिनिधियों ने किसान संगठनों के साथ अनेक दौर की बातचीत की। जनवरी 2021 में सरकार और किसान संगठनों के बीच कई दौर की वार्ता हुई, लेकिन कानूनों को पूरी तरह वापस लेने की किसान संगठनों की मांग और सरकार द्वारा संशोधनों के प्रस्ताव के बीच सहमति नहीं बन सकी।

किसान आंदोलन की सफलता और कृषि कानूनों की वापसी: 19 नवंबर 2021 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने राष्ट्र के नाम संबोधन में तीनों कृषि कानून वापस लेने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि सरकार संसद के आगामी सत्र में इन कानूनों को निरस्त करने की संवैधानिक प्रक्रिया पूरी करेगी। इसके बाद संसद ने Farm Laws Repeal Bill, 2021 पारित किया और तीनों कानूनों को निरस्त कर दिया गया। सरकारी रिकॉर्ड के अनुसार तीनों कृषि कानून 1 दिसंबर 2021 को Farm Laws Repeal

गया। ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन के नेतृत्व में छह वर्ष चले आंदोलन के बाद असम समझौता हुआ। आंदोलन से निकले नेताओं ने असम गण परिषद बनाई और सत्ता तक पहुँचे। यानी आंदोलन मांग करते-करते स्वयं राजनीतिक विकल्प बन गया।

मंडल और मंदिर ने बदल दिया राजनीति का गणित

फिर आया 1990 का दौर। मंडल

Act, 2021 के माध्यम से समाप्त हुए। यह घटना भारतीय लोकतांत्रिक इतिहास में विशेष महत्व रखती है। किसी बड़े आर्थिक सुधार को इतने लंबे और व्यापक जनविरोध के बाद वापस लेना सरकार और जनआंदोलन के संबंध का महत्वपूर्ण उदाहरण था। किसान आंदोलन से यह भी स्पष्ट हुआ कि लोकतंत्र में चुनावी बहुमत सरकार को कानून बनाने का अधिकार देता है, लेकिन किसी नीति की सामाजिक स्वीकार्यता के लिए जनसहमति भी महत्वपूर्ण है।

किसान आंदोलन की उपलब्धियाँ: किसान आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि कृषि कानूनों की वापसी थी। इसके अतिरिक्त इस आंदोलन ने MSP, कृषि संकट, ग्रामीण आय, कॉरपोरेट कृषि, मंडी व्यवस्था और किसान संगठनों की भूमिका को राष्ट्रीय बहस का केंद्र बनाया। लेकिन आंदोलन की कुछ सीमाएँ भी थीं। भारत के सभी किसानों की समस्याएँ समान नहीं हैं। छोटे किसानों, भूमिहीन कृषि मजदूरों, महिला किसानों और विभिन्न राज्यों की कृषि प्रणालियों की आवश्यकताएँ अलग-अलग हैं। आंदोलन में पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश की दृश्यता बहुत अधिक रही, जबकि पूर्वी और दक्षिणी भारत के कई कृषि क्षेत्रों की आवाज अपेक्षाकृत कम दिखाई दी। फिर भी व्यापक राजनीतिक प्रभाव की दृष्टि से किसान आंदोलन मोदी सरकार के दौर का सबसे स्पष्ट उदाहरण है कि संगठित और लंबे समय तक चलने वाला जनदबाव सरकार के नीति-निर्णय को बदल सकता है।

आयोग की सिफारिशों और उसके पक्ष-विपक्ष में हुई लामबंदी ने सामाजिक न्याय, OBC प्रतिनिधित्व और सत्ता में हिस्सेदारी को राजनीति के केंद्र में ला दिया। उसी समय राम जन्मभूमि आंदोलन ने सांस्कृतिक-धार्मिक पहचान को राष्ट्रीय राजनीति की बड़ी धुरी बनाया। मंडल और मंदिर ने मिलकर उत्तर भारत की राजनीति का पुराना गणित ही बदल दिया।

CAA आंदोलन

नागरिकता संशोधन कानून और शाहीन बाग आंदोलन

2019 में नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) संसद से पारित हुआ। सरकार ने इसे पड़ोसी देशों में धार्मिक उत्पीड़न का सामना करने वाले हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई समुदायों के कुछ लोगों को भारतीय नागरिकता प्राप्त करने का मार्ग देने वाला कानून बताया। सरकार ने यह भी स्पष्ट किया कि यह भारतीय नागरिकों की नागरिकता छीनने वाला कानून नहीं है। इसके विरोधियों ने कानून में धर्म को नागरिकता के आधार से जोड़ने पर आपत्ति जताई और इसे भारतीय संविधान के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप तथा समानता के सिद्धांत से जोड़कर देखा। विशेष रूप से CAA को प्रस्तावित राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) की आशंकाओं के साथ जोड़कर देखा गया। सरकार ने कहा कि CAA का उद्देश्य किसी भारतीय नागरिक की नागरिकता छीनना नहीं है। इस विवाद ने देशभर में विरोध प्रदर्शनों

आंदोलन- दिल्ली की सड़क से केंद्र तक

2011 में अन्ना हजारे का भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन फिर दिल्ली की सड़कों से राजनीति के केंद्र तक पहुँचा। लोकपाल राष्ट्रीय मुद्दा बना और उसी आंदोलन से आगे चलकर आम आदमी पार्टी जैसी नई राजनीतिक शक्ति निकली। 2012 का निर्भया आंदोलन और अलग था। उसके पीछे न कोई राजनीतिक दल था, न कोई स्थापित नेतृत्व। फिर भी युवाओं और नागरिकों का स्वतः स्फूर्त आक्रोश इतना

को जन्म दिया। दिल्ली का शाहीन बाग आंदोलन इसका सबसे प्रसिद्ध उदाहरण बना। दिसंबर 2019 से शुरू हुआ यह धरना मुख्य रूप से मुस्लिम महिलाओं की भागीदारी के कारण राष्ट्रीय प्रतीक बन गया। आंदोलन में महिलाओं ने लंबे समय तक सार्वजनिक स्थल पर बैठकर विरोध किया और संविधान की प्रस्तावना तथा राष्ट्रीय ध्वज को अपने प्रतिरोध के प्रतीकों के रूप में इस्तेमाल किया। शाहीन बाग की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि महिलाओं की एक बड़ी संख्या पहली बार सार्वजनिक राजनीतिक प्रतिरोध के केंद्र में दिखाई दी। आंदोलन ने यह प्रश्न उठाया कि भारतीय मुस्लिम नागरिक स्वयं को

राष्ट्र और संविधान के संदर्भ में किस प्रकार देखते हैं तथा नागरिकता की अवधारणा उनके लिए क्या अर्थ रखती है। दूसरी ओर, सरकार और उसके समर्थकों ने आंदोलन के कारण सार्वजनिक आवागमन में बाधा, कानून-व्यवस्था और राजनीतिक ध्रूवीकरण को लेकर चिंता व्यक्त की। फरवरी 2020 में दिल्ली में सांप्रदायिक हिंसा ने इस पूरे विवाद को और गंभीर बना दिया। शाहीन बाग आंदोलन अंततः CAA को वापस कराने में सफल नहीं हुआ, लेकिन उसने भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और शांतिपूर्ण धरने की संस्कृति को एक नया आयाम दिया। CAA विरोधी आंदोलन की एक खास बात यह थी कि संविधान और उसकी प्रस्तावना आंदोलन की भाषा का प्रमुख हिस्सा बन गए। प्रदर्शन स्थलों पर संविधान की प्रस्तावना पढ़ी गई, राष्ट्रगान गाया गया और तिरंगा लहराया गया। यह दृश्य भारतीय राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण था। आमतौर पर संविधान को सरकारी संस्थाओं और न्यायपालिका के संदर्भ में समझा जाता है, लेकिन इस आंदोलन में संविधान को जनता ने राज्य से अपने अधिकार माँगने के दस्तावेज के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार नागरिकता आंदोलन ने भारतीय लोकतंत्र में संवैधानिक देशभक्ति की एक अलग अभिव्यक्ति को जन्म दिया। आंदोलनकारियों ने कहा कि वे सरकार का विरोध नहीं बल्कि संविधान की रक्षा कर रहे हैं। सरकार और उसके समर्थकों ने इस व्याख्या से असहमति जताई और कानून को संवैधानिक तथा मानवीय आधारों पर उचित बताया। यह मतभेद आज भी भारतीय राजनीति में मौजूद है।

व्यापक हुआ कि महिला सुरक्षा राष्ट्रीय राजनीतिक एजेंडा बनी और आपराधिक कानूनों में महत्वपूर्ण बदलाव हुए। 2020-21 के किसान आंदोलन ने एक बार फिर यही सिद्धांत दोहराया। एक वर्ष से अधिक चले विरोध के बाद केंद्र सरकार को तीन कृषि कानून वापस लेने पड़े। संदेश साफ था- लोकतंत्र में बहुमत सरकार को निर्णय लेने की शक्ति देता है, लेकिन जनभावना को हमेशा अनसुना करने का अधिकार नहीं।

ऐतिहासिक युवा आंदोलन

इसी ऐतिहासिक क्रम में अब 2026 का

युवा आंदोलन जुड़ गया है। उस आंदोलन की सफलता को केवल इस आधार पर नहीं मापा जाना चाहिए कि कौनसा फैसला हुआ या किस मंत्री ने इस्तीफा दिया। उसका बड़ा राजनीतिक असर अब दिख रहा है, उसने Gen-Z को राजनीतिक दलों की प्राथमिकता बना दिया है। हाल के दिनों में भाजपा और सरकार की युवा-केंद्रित आउटरीच तेज हुई है। केंद्र स्तर पर

जाट आरक्षण आंदोलन

अपने अधिकारों के हक की लड़ाई

जाट आरक्षण आंदोलन 2016 हरियाणा के सबसे बड़े और सबसे हिंसक सामाजिक आंदोलनों में से एक था। जाट समुदाय की प्रमुख मांग थी कि उसे अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) में शामिल करके केंद्र और राज्य सरकार की नौकरियों तथा शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण दिया जाए। फरवरी 2016 में आंदोलन ने व्यापक हिंसक रूप ले लिया, जिससे हरियाणा में जनजीवन, परिवहन, उद्योग और सामाजिक संबंधों पर गंभीर प्रभाव पड़ा। हरियाणा में जाट समुदाय लंबे समय से आरक्षण की मांग करता रहा था। केंद्र स्तर पर 2014 में तत्कालीन UPA सरकार ने जाटों को केंद्रीय OBC सूची में शामिल करने की अधिसूचना जारी की थी। लेकिन मार्च 2015 में सुप्रीम कोर्ट ने उस निर्णय को रद्द कर दिया। न्यायालय ने कहा कि केवल राजनीतिक प्रभाव या सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर किसी समुदाय को पिछड़ा वर्ग घोषित नहीं किया जा सकता। इसके बाद आरक्षण की मांग फिर तेज हुई। 2016 में जाट समुदाय के विभिन्न संगठनों ने हरियाणा में आंदोलन शुरू किया। आंदोलन की शुरूआत कई स्थानों पर शांतिपूर्ण धरने और प्रदर्शन से हुई, लेकिन बाद में स्थिति तेजी से बिगड़ गई। 2016 का जाट आरक्षण आंदोलन हरियाणा के सामाजिक-राजनीतिक इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है। इसने आरक्षण की राजनीति, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता और जातीय पहचान के प्रश्नों को राष्ट्रीय विमर्श में प्रमुखता दी। लेकिन आंदोलन के हिंसक रूप ने कानून-व्यवस्था और सामाजिक सद्भाव को गंभीर नुकसान पहुंचाया।

विश्वविद्यालयों और युवाओं से सीधे संवाद की योजनाएँ सामने आई हैं, जबकि राज्यों में भी Gen-Z तक पहुँचने के विशेष प्रयास हो रहे हैं। कांग्रेस भी शिक्षा और परीक्षा व्यवस्था जैसे युवा सरोकारों को प्रमुखता दे रही है। यानी सत्ता और विपक्ष दोनों ने संदेश पढ़ लिया है- युवा असंतोष अब केवल सोशल मीडिया ट्रेंड नहीं, राजनीतिक शक्ति भी बन सकता है।

2024 किसान आंदोलन/दिल्ली चलो आंदोलन

वर्ष 2024 में किसानों ने न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की कानूनी गारंटी सहित विभिन्न मांगों को लेकर केंद्र सरकार के विरूद्ध व्यापक आंदोलन किया। इसे दिल्ली चलो आंदोलन के नाम से जाना गया। आंदोलन की शुरूआत 13 फरवरी 2024 को किसानों के दिल्ली कूच से हुई। इसका नेतृत्व मुख्यतः किसान मजदूर मोर्चा (KMM) और संयुक्त किसान मोर्चा (गैर-राजनीतिक) से जुड़े किसान संगठनों ने किया। 202021 के किसान आंदोलन के दौरान केंद्र सरकार ने तीन कृषि कानूनों को वापस ले लिया था। इसके बाद किसानों की ओर से MSP को कानूनी गारंटी देने सहित कई मांगें उठती रहीं। 2024 में किसान संगठनों का आरोप था कि इन मांगों पर अपेक्षित प्रगति नहीं हुई है। इसी पृष्ठभूमि में फरवरी 2024 में दिल्ली कूच का आह्वान किया गया। किसान नेताओं के अनुसार 200 से अधिक किसान संगठनों ने दिल्ली चलो मार्च में भाग लेने की तैयारी की थी। किसानों का कूच मुख्यतः पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश से हुआ। आंदोलन की सबसे महत्वपूर्ण मांग थी सभी फसलों के लिए MSP की कानूनी गारंटी। इसके अलावा किसानों ने कई अन्य मांगें भी रखीं-MSP को कानूनी अधिकार बनाने की मांग। फसलों के मूल्य निर्धारण में स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू करने की मांग। किसानों और कृषि मजदूरों की कर्जमाफी। किसानों तथा कृषि मजदूरों के लिए पेंशन। 2020-21 के किसान आंदोलन के दौरान दर्ज मामलों को वापस लेने की मांग। लखीमपुर खीरी हिंसा के पीड़ित किसानों के लिए न्याय और मुआवजा। बिजली क्षेत्र से संबंधित प्रस्तावित बदलावों का विरोध। भूमि अधिग्रहण कानून, 2013 के प्रावधानों को बनाए रखने की मांग। आंदोलन के दौरान मृत किसानों के परिवारों के लिए मुआवजा।

एक हाथ में वोटर कार्ड, दूसरे में स्मार्टफोन

यह भारत की पहली विशाल मतदाता पीढ़ी है जिसके एक हाथ में वोटर कार्ड और दूसरे में स्मार्टफोन है। वह नेता का भाषण सुन सकती है और उसी समय उसका फैक्ट-चेक भी कर सकती है। पहले राजनीतिक दल संदेश बनाते थे और कार्यकर्ता उसे जनता तक पहुँचाते थे; आज एक छात्र का वीडियो, एक मीम, एक पॉडकास्ट या तीस सेकंड की रील लाखों लोगों के बीच राजनीतिक विमर्श खड़ा कर सकती है। युवा अब पूछेगा- नौकरियाँ कहाँ हैं? भर्ती समय पर क्यों नहीं होती? परीक्षा का पेपर सुरक्षित क्यों नहीं है? डिग्री के बाद अवसर क्या है? AI और ऑटोमेशन के दौर में मेरा कौशल कहाँ खड़ा है? स्टार्टअप और स्वरोजगार के लिए वास्तविक व्यवस्था क्या

नोटबंदी के बाद फैला असंतोष

2016 में नोटबंदी सरकार के सबसे बड़े आर्थिक निर्णयों में से एक थी। 500 और 1000 रूपये के पुराने नोटों को तत्काल प्रभाव से अमान्य किया गया। सरकार ने इसे काले धन, नकली मुद्रा और आतंकवाद के वित्त पोषण पर प्रहार बताया। नोटबंदी के दौरान बैंकों और एटीएम के बाहर लंबी कतारें लगीं। छोटे व्यापारियों, दैनिक मजदूरों और नकद अर्थव्यवस्था पर निर्भर लोगों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। विपक्षी दलों ने इसके खिलाफ प्रदर्शन किए। हालाँकि नोटबंदी के विरोध को किसान आंदोलन या CAA आंदोलन की तरह लंबे समय तक चलने वाले स्वतंत्र जन आंदोलन का रूप नहीं मिला। इसके बावजूद यह जननीति और नागरिक अनुभव के बीच संबंध को समझने का महत्वपूर्ण उदाहरण है। यहाँ यह अंतर समझना जरूरी है कि किसी सरकारी नीति से व्यापक असंतोष होना और उसके खिलाफ स्थायी जन आंदोलन खड़ा होना दो अलग-अलग बातें हैं।

GST और छोटे व्यापारियों की चिंता

2017 में GST लागू हुआ। इसका उद्देश्य देश में अलग-अलग अप्रत्यक्ष करों को एकीकृत कर एक राष्ट्रीय कर प्रणाली बनाना था। सरकार ने इसे एक देश, एक कर की दिशा में बड़ा सुधार बताया। शुरूआती चरण में व्यापारियों और छोटे उद्योगों के बीच अनुपालन, ऑनलाइन रिटर्न, कर दरों और तकनीकी प्रक्रियाओं को लेकर असंतोष दिखाई दिया। कई व्यापारिक संगठनों ने विरोध और बंद का आह्वान किया। हालाँकि GST विरोध भी किसी एक लंबे राष्ट्रीय जन आंदोलन में परिवर्तित नहीं हुआ। इसका एक कारण यह था कि सरकार ने समय-समय पर दरों और अनुपालन व्यवस्था में बदलाव किए तथा व्यापारियों की शिकायतों को संबोधित करने के प्रयास किए। यह उदाहरण बताता है कि सरकार और हितसमूहों के बीच वार्ता की गुंजाइश होने पर कई बार असंतोष आंदोलन के बजाय नीतिगत संशोधन में बदल जाता है।

है? आंदोलन खत्म हो जाते हैं। धरने उठ जाते हैं। जंतर-मंतर फिर सामान्य हो जाता है। लेकिन सफल आंदोलन की असली पहचान यही है कि उसके जाने के बाद भी राजनीति पहले जैसी नहीं रहती और शायद इस बार भी वही हो रहा है। भारत की राजनीति युवाओं की तरफ देख रही है- क्योंकि युवा अब केवल वोट देने वाली पीढ़ी नहीं, एजेंडा तय करने वाली पीढ़ी बनने की

पहलवानों का आंदोलन

2023 में भारतीय कुश्ती जगत के कई प्रमुख पहलवानों ने भारतीय कुश्ती महासंघ के तत्कालीन अध्यक्ष बृजभूषण शरण सिंह के खिलाफ प्रदर्शन किया। महिला पहलवानों ने यौन उत्पीड़न के आरोप लगाए और कार्रवाई की मांग की। दिल्ली के जंतर-मंतर पर लंबे समय तक प्रदर्शन चला। इस आंदोलन को व्यापक सामाजिक और राजनीतिक समर्थन मिला। आंदोलन का सबसे चर्चित चरण तब आया जब 28 मई 2023 को नए संसद भवन के उद्घाटन के दिन पहलवानों को प्रदर्शन स्थल से हटाया गया। इस घटना ने महिला खिलाड़ियों की सुरक्षा, खेल संस्थाओं की जवाबदेही, राजनीतिक प्रभाव और यौन उत्पीड़न की शिकायतों के निपटारे से संबंधित प्रश्नों को राष्ट्रीय बहस में ला दिया। पहलवानों के आंदोलन की एक विशेषता यह थी कि इसमें भारत के अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित खिलाड़ी शामिल थे। इससे खेल जगत में सत्ता-संबंधों और खिलाड़ियों की संस्थागत निर्भरता पर चर्चा हुई। यह आंदोलन तत्काल किसी एक नीति को वापस कराने वाला आंदोलन नहीं था, लेकिन इसने लैंगिक न्याय और संस्थागत जवाबदेही के मुद्दे को राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण बनाया।

ओर है।

मोदी सरकार और जन आंदोलनों की पृष्ठभूमि

2014 के बाद भारतीय राजनीति में एक मजबूत केंद्रीय नेतृत्व का उदय हुआ। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सरकार ने अनेक बड़े और त्वरित निर्णय लिए। नोटबंदी, वस्तु एवं सेवा कर (GST), श्रम कानूनों में बदलाव, दिवाला कानून, कृषि सुधार, नागरिकता कानून, जम्मू-कश्मीर से संबंधित संवैधानिक बदलाव और अग्निपथ जैसी नीतियों ने व्यापक सार्वजनिक चर्चा पैदा की। सरकार का तर्क रहा कि तेज आर्थिक और प्रशासनिक सुधारों के लिए कभी-कभी कठिन निर्णय आवश्यक होते हैं। दूसरी तरफ विरोध करने वाले समूहों का कहना था कि व्यापक सामाजिक प्रभाव वाली नीतियों को लागू करने से पहले

पर्याप्त सार्वजनिक विमर्श और हितधारकों से परामर्श आवश्यक है। इसी अंतर ने कई बार आंदोलन का रूप लिया। यह भी ध्यान देने योग्य है कि हर आंदोलन केवल विपक्षी राजनीतिक दलों द्वारा संचालित नहीं था। अनेक आंदोलनों में गैर राजनीतिक संगठन, किसान यूनियनें, छात्र समूह, महिला समूह, नागरिक समाज संगठन और स्थानीय समुदाय प्रमुख भूमिका में रहे।

भूमि अधिग्रहण कानून के खिलाफ आंदोलन

वर्ष 2015 में नरेंद्र मोदी सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण कानून में प्रस्तावित संशोधनों के विरूद्ध देश के विभिन्न हिस्सों में किसानों, किसान संगठनों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और विपक्षी राजनीतिक दलों ने व्यापक विरोध प्रदर्शन किए। यह आंदोलन केवल भूमि के अधिग्रहण का विरोध नहीं था, बल्कि किसानों की सहमति, उचित मुआवजा, पुनर्वास तथा कृषि भूमि और आजीविका की सुरक्षा से जुड़े प्रश्नों का भी आंदोलन था। इस मुद्दे ने विकास और किसान हितों के बीच संतुलन को राष्ट्रीय राजनीतिक बहस के केंद्र में ला दिया। फरवरी 2015 में सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हजारे ने दिल्ली के जंतर-मंतर पर भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के खिलाफ दो दिवसीय आंदोलन शुरू किया। उनके साथ मेधा पाटकर सहित कई सामाजिक कार्यकर्ता और समर्थक शामिल हुए। 23 फरवरी 2015 को विभिन्न किसान संगठनों ने देश के अनेक जिलों में विरोध प्रदर्शन किए। अखिल भारतीय किसान महासभा के अनुसार, उस दिन लगभग 84 जिलों में प्रदर्शन आयोजित किए गए और अध्यादेश वापस लेने की मांग की गई। आंदोलन धीरे-धीरे राजनीतिक मुद्दा भी बन गया। विपक्षी दलों ने सरकार पर किसान-विरोधी कानून लाने का आरोप लगाया। मार्च 2015 में सोनिया गांधी के नेतृत्व में विपक्षी दलों ने संसद से राष्ट्रपति भवन तक मार्च किया और राष्ट्रपति से किसानों के हितों की रक्षा करने का आग्रह किया। मोदी सरकार के शुरूआती वर्षों में ही भूमि अधिग्रहण से संबंधित प्रस्तावों को लेकर व्यापक विरोध हुआ। सरकार भूमि अधिग्रहण कानून में बदलाव के माध्यम से औद्योगिक और बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं के लिए भूमि उपलब्ध कराने की प्रक्रिया को आसान बनाना चाहती थी। किसान संगठनों और विपक्षी दलों ने इसका विरोध किया। उनका तर्क था कि प्रस्तावित बदलाव किसानों और भूमि मालिकों के हितों को कमजोर कर सकते हैं। भूमि अधिकार आंदोलन ने इस मुद्दे को राष्ट्रीय स्तर पर उठाया। किसान संगठनों के व्यापक मंच ने देश के अनेक जिलों में प्रदर्शन किए और संसद तक मार्च आयोजित किए। एक अध्ययन के अनुसार इस आंदोलन ने सरकार के प्रस्ताव को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया पर पर्याप्त राजनीतिक दबाव बनाया और अंततः सरकार को प्रस्तावित बदलावों से पीछे हटना पड़ा। यह मोदी सरकार के शुरूआती दौर में जनदबाव की महत्वपूर्ण मिसाल थी।

रोजगार, बेरोजगारी और परीक्षा से जुड़े आंदोलन

मोदी सरकार के दौर में रोजगार और सरकारी भर्ती से जुड़े अनेक छोटे-बड़े आंदोलन हुए। रेलवे भर्ती, प्रतियोगी परीक्षाओं, भर्ती परीक्षाओं में देरी, प्रश्नपत्र लीक और सरकारी नौकरियों की संख्या जैसे मुद्दों ने युवाओं को आंदोलित किया। इन आंदोलनों का एक व्यापक संदर्भ भारत में युवाओं की बढ़ती आकांक्षाएँ हैं। शिक्षित युवाओं की संख्या बढ़ी है और सरकारी नौकरी आज भी बड़ी संख्या में परिवारों के लिए सामाजिक सुरक्षा और प्रतिष्ठा का माध्यम है। जब भर्ती प्रक्रिया लंबी होती है या परीक्षा में अनियमितता की खबर आती है, तो इसका असर केवल अभ्यर्थी पर नहीं बल्कि पूरे परिवार पर पड़ता है। 2022 का अग्निपथ आंदोलन इसी व्यापक रोजगार संकट की पृष्ठभूमि में समझा जा सकता है। 2024 में भी विभिन्न भर्ती परीक्षाओं और प्रश्नपत्र लीक के मुद्दों पर युवाओं में

JNU छात्र आंदोलन (2016)

2016 का जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) छात्र आंदोलन भारत के हाल के सबसे चर्चित छात्र आंदोलनों में से एक था। इसकी शुरूआत फरवरी 2016 में विश्वविद्यालय परिसर में आयोजित एक कार्यक्रम और उसके बाद छात्र नेताओं के खिलाफ हुई कार्रवाई से हुई। देखते ही देखते यह मामला अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, राष्ट्रवाद, देशद्रोह कानून, विश्वविद्यालय स्वायत्तता और छात्र राजनीति पर राष्ट्रीय बहस का विषय बन गया। कन्हैया कुमार की गिरफ्तारी के बाद JNU में छात्रों ने विरोध प्रदर्शन शुरू कर दिया। विश्वविद्यालय के अनेक छात्रों और शिक्षकों ने उनकी गिरफ्तारी का विरोध किया तथा उनकी रिहाई की मांग की। यह मुद्दा शीघ्र ही JNU की सीमा से बाहर निकल गया। दिल्ली विश्वविद्यालय, हैदराबाद विश्वविद्यालय और अन्य विश्वविद्यालयों के छात्रों तथा शिक्षकों ने भी विभिन्न रूपों में समर्थन या विरोध प्रदर्शन किए। देश के राजनीतिक दल भी इस विवाद में अलग-अलग पक्षों में बंट गए। JNU परिसर में छात्रों ने आजादी जैसे नारों के माध्यम से सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता की मांगों को व्यक्त किया। दूसरी ओर, आलोचकों ने कुछ नारों को राष्ट्र-विरोधी बताते हुए आंदोलन की कड़ी आलोचना की। 2016 का JNU छात्र आंदोलन भारतीय लोकतंत्र में असहमति, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और राष्ट्रवाद के बीच संबंध पर हुई एक महत्वपूर्ण बहस का प्रतीक बन गया। एक पक्ष ने इसे राष्ट्र-विरोधी गतिविधियों के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई के रूप में देखा, जबकि दूसरे पक्ष ने इसे छात्रों की अभिव्यक्ति और असहमति के अधिकार का प्रश्न माना। इस आंदोलन की सबसे बड़ी विरासत यह रही कि इसने विश्वविद्यालयों को केवल शिक्षा के केंद्र के रूप में नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक विचार-विमर्श और राजनीतिक बहस के महत्वपूर्ण मंच के रूप में राष्ट्रीय चर्चा के केंद्र में ला दिया।

असंतोष दिखाई दिया। इस प्रकार युवा आंदोलनों को केवल तत्कालीन सरकार की किसी एक योजना के संदर्भ में समझना पर्याप्त नहीं है। इनके पीछे रोजगार की गुणवत्ता, निजी क्षेत्र में असुरक्षा, सरकारी पदों की सीमित संख्या और प्रतियोगी परीक्षाओं की विश्वसनीयता जैसे संरचनात्मक प्रश्न हैं।

महिलाओं के आंदोलन और सार्वजनिक जीवन में नई भागीदारी

मोदी सरकार के काल में महिलाओं की जन आंदोलनों में भूमिका विशेष रूप से दिखाई दी। शाहीन बाग इसका सबसे प्रमुख उदाहरण था। किसान आंदोलन में भी बड़ी संख्या में महिला किसानों और किसान परिवारों की महिलाओं की भागीदारी दिखाई दी। महिलाओं के आंदोलनों का महत्व केवल उनकी संख्या में नहीं है। भारतीय

महिला सुरक्षा को लेकर डॉक्टरों का आंदोलन, 2024

अगस्त 2024 में कोलकाता के आर.जी. कर मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल में एक महिला प्रशिक्षु डॉक्टर के बलात्कार और हत्या की घटना के बाद देशभर के डॉक्टरों ने व्यापक विरोध प्रदर्शन किया। यह आंदोलन केवल घटना के दोषियों को सजा दिलाने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि महिला सुरक्षा, अस्पतालों में डॉक्टरों की कार्यस्थल सुरक्षा और स्वास्थ्यकर्मियों की सुरक्षा के लिए प्रभावी व्यवस्था की मांग का राष्ट्रीय आंदोलन बन गया। शुरूआत में आर.जी. कर अस्पताल के जूनियर डॉक्टरों ने काम बंद किया। शीघ्र ही यह विरोध पश्चिम बंगाल के अन्य सरकारी मेडिकल कॉलेजों और अस्पतालों तक फैल गया। कई स्थानों पर डॉक्टरों ने गैर-आपातकालीन सेवाओं का बहिष्कार किया और बाद में आपातकालीन सेवाओं को भी रोकने की घोषणा की। आंदोलन को देश के अन्य हिस्सों से भी समर्थन मिला। दिल्ली सहित कई शहरों में रेजिडेंट डॉक्टरों ने हड़ताल और विरोध प्रदर्शन किए। दिल्ली के प्रमुख अस्पतालों के डॉक्टरों ने लगभग 11 दिनों के बाद 22 अगस्त को सुप्रीम कोर्ट की अपील पर अपनी हड़ताल समाप्त की। इस मार्च ने डॉक्टरों के आंदोलन को व्यापक महिला सुरक्षा आंदोलन का रूप देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आंदोलन का संदेश था कि महिलाओं को दिन या रात किसी भी समय बिना भय के सार्वजनिक स्थानों पर रहने और काम करने का अधिकार होना चाहिए। 2024 का डॉक्टरों का आंदोलन आधुनिक भारत के महत्वपूर्ण सामाजिक आंदोलनों में से एक रहा।

समाज में महिलाओं की सार्वजनिक राजनीतिक भागीदारी लंबे समय तक पुरूषों की तुलना में सीमित रही। लेकिन हाल के वर्षों में महिलाओं ने शिक्षा, नागरिकता, कृषि, लैंगिक न्याय और सुरक्षा जैसे मुद्दों पर स्वयं को आंदोलनकारी शक्ति के रूप में स्थापित किया। इससे भारतीय लोकतंत्र में आंदोलन की पारंपरिक छवि भी बदली है। आंदोलन अब केवल राजनीतिक दलों के पुरूष कार्यकर्ताओं का क्षेत्र नहीं रह गया है। छात्राएँ, गृहिणियाँ, महिला किसान, खिलाड़ी और पेशेवर महिलाएँ भी सार्वजनिक विरोध का हिस्सा बनी हैं।

कोविड-19 और नागरिक समाज

2020 में कोविड-19 महामारी ने देश की सामाजिक और आर्थिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। लॉकडाउन के दौरान लाखों प्रवासी श्रमिकों के सामने रोजगार, भोजन और घर लौटने की समस्या पैदा हुई। इस समय पारंपरिक राजनीतिक आंदोलन अपेक्षाकृत सीमित रहे क्योंकि महामारी और सामाजिक दूरी के कारण बड़े जमावड़ों पर प्रतिबंध था। लेकिन नागरिक समाज, स्वयंसेवी संगठनों, गुरूद्वारों, धार्मिक संस्थाओं और स्थानीय समूहों ने राहत कार्यों का व्यापक नेटवर्क बनाया। इस दौर ने जनभागीदारी के एक अलग रूप को

पटेल आरक्षण आंदोलन-गुजरात, 2015

पटेल आरक्षण आंदोलन, जिसे पाटीदार अनामत आंदोलन भी कहा जाता है, वर्ष 2015 में गुजरात में हुआ एक बड़ा सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन था। इसका मुख्य उद्देश्य पाटीदार/पटेल समुदाय को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) में शामिल कर शिक्षा और सरकारी नौकरियों में आरक्षण दिलाना था। आंदोलन का सबसे प्रमुख चेहरा युवा नेता हार्दिक पटेल बने। आंदोलन शुरूआत में रैलियों और सभाओं के रूप में चला, लेकिन 25 अगस्त 2015 की अहमदाबाद रैली के बाद गुजरात के कई हिस्सों में हिंसक घटनाएं हुईं। इसलिए यह आंदोलन मोदी सरकार के दौर में हुए प्रमुख आरक्षण आंदोलनों और हिंसक जन आंदोलनों के उदाहरण के रूप में महत्वपूर्ण है। 2015 में पटेल अनामत आंदोलन समिति (PAAS) के नेतृत्व में यह मांग तेजी से फैलने लगी। हार्दिक पटेल आंदोलन के प्रमुख युवा नेता के रूप में उभरे। गुजरात के विभिन्न शहरों में लगातार रैलियां और सभाएं आयोजित की गईं। गुजरात हाई कोर्ट के रिकॉर्ड के अनुसार, जुलाई-अगस्त 2015 में PAAS ने अनेक स्थानों पर प्रदर्शन किए और 17 अगस्त को सूरत में लगभग 3 लाख लोगों की बड़ी रैली हुई। 25 अगस्त के बाद गुजरात के कई शहरों में पुलिस वाहनों, बसों

और अन्य सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने, आगजनी और पुलिस के साथ झड़पों की घटनाएं सामने आईं। गुजरात हाई कोर्ट के रिकॉर्ड में पुलिस स्टेशनों, वाहनों और निजी संपत्ति को आग लगाने तथा कुछ स्थानों पर ट्रेनों को रोकने की घटनाओं का उल्लेख है। अहमदाबाद, सूरत, मेहसाणा, राजकोट और अन्य क्षेत्र आंदोलन के प्रमुख प्रभावित स्थान बने। हिंसा के बाद कई क्षेत्रों में कर्फ्यू लगाया गया और कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए बड़ी संख्या में सुरक्षा बल तैनात किए गए। एक विधि आयोग-संबंधी रिपोर्ट में अहमदाबाद और अन्य क्षेत्रों में बसों तथा पुलिस वाहनों को जलाने और सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचने का उल्लेख है।

सामने रखा। हर जनआंदोलन सड़क पर प्रदर्शन के रूप में नहीं होता। संकट के समय सामुदायिक सहायता, राहत कार्य और स्वयंसेवा भी नागरिक भागीदारी का महत्वपूर्ण रूप हैं।

विश्वविद्यालयों और युवाओं के आंदोलन

मोदी सरकार के शुरूआती वर्षों में विश्वविद्यालय परिसर राजनीतिक और सामाजिक बहस के महत्वपूर्ण केंद्र बने। 2015 में हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय के शोधार्थी रोहित वेमुला की आत्महत्या के बाद देश के अनेक विश्वविद्यालयों में विरोध प्रदर्शन हुए। इस घटना ने दलित छात्रों के अधिकार, विश्वविद्यालयों में सामाजिक भेदभाव, छात्र राजनीति और उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रतिनिधित्व के प्रश्न को राष्ट्रीय बहस का विषय बनाया। 2016 में

श्रमिक और ट्रेड यूनियन आंदोलन

2014 के बाद केंद्र सरकार ने श्रम कानूनों को सरल बनाने और अनेक पुराने कानूनों को चार श्रम संहिताओं में समाहित करने की प्रक्रिया शुरू की। सरकार का तर्क था कि इससे श्रम कानून सरल होंगे, अनुपालन आसान होगा और रोजगार तथा निवेश को बढ़ावा मिलेगा। ट्रेड यूनियनों ने कई प्रावधानों पर चिंता व्यक्त की। उनका कहना था कि नए प्रावधानों से श्रमिकों की सौदेबाजी शक्ति और रोजगार सुरक्षा प्रभावित हो सकती है। विभिन्न केंद्रीय ट्रेड यूनियनों ने समय-समय पर देशव्यापी हड़तालें और भारत बंद आयोजित किए। बैंकिंग, बीमा, परिवहन, कोयला, सार्वजनिक क्षेत्र और अन्य क्षेत्रों के कर्मचारी भी अलग-अलग मुद्दों पर आंदोलनों में शामिल हुए। इन आंदोलनों ने एक पुराना लेकिन महत्वपूर्ण प्रश्न फिर उठाया। आर्थिक विकास का लाभ श्रमिकों तक किस प्रकार पहुँचे? क्या रोजगार की संख्या के साथ रोजगार की गुणवत्ता और सुरक्षा भी महत्वपूर्ण नहीं है? कोविड-19 महामारी के दौरान प्रवासी मजदूरों का संकट इस प्रश्न को और गंभीर बनाकर सामने लाया। हालांकि महामारी के समय का प्रवासी संकट परंपरागत अर्थ में एक संगठित जनआंदोलन नहीं था, लेकिन उसने भारत की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था और श्रमिक सुरक्षा की कमजोरियों को उजागर किया।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU) में हुई घटनाओं ने भी देशव्यापी राजनीतिक विवाद पैदा किया। विश्वविद्यालय परिसर में आयोजित एक कार्यक्रम और उसके बाद लगाए गए कथित राष्ट्र-विरोधी नारों को लेकर गिरफ्तारियाँ हुईं। इस घटना ने राष्ट्रवाद, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता और देशद्रोह जैसे कानूनी प्रावधानों पर तीखी बहस को जन्म दिया। इन घटनाओं का महत्व केवल विश्वविद्यालयों तक सीमित नहीं रहा। उन्होंने यह प्रश्न उठाया कि लोकतंत्र में सरकार या राष्ट्र की आलोचना की सीमा क्या है? क्या सरकार की आलोचना राष्ट्र-विरोधी मानी जा सकती है? विश्वविद्यालयों में असहमति का स्थान कितना होना चाहिए? इन प्रश्नों पर भारतीय समाज में आज भी व्यापक मतभेद हैं। युवा आंदोलनों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह रही कि उनका राजनीतिक प्रभाव प्रत्यक्ष चुनावी परिणामों से अधिक विचारधारात्मक और सामाजिक विमर्श में दिखाई दिया। सोशल मीडिया के कारण विश्वविद्यालय परिसर में शुरू होने वाली बहसें कुछ ही घंटों में राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचने लगीं।

दलित और सामाजिक न्याय से जुड़े आंदोलन

पर्यावरण और स्थानीय अधिकारों के आंदोलन

मोदी सरकार के दौरान विकास परियोजनाओं, भूमि अधिग्रहण, जंगल और पर्यावरण से संबंधित कई स्थानीय आंदोलन भी सामने आए। हालांकि इनमें से सभी का सीधा संबंध केंद्र सरकार से नहीं था, लेकिन केंद्रीय पर्यावरण नीति और बड़े बुनियादी ढाँचे के प्रोजेक्ट इनके संदर्भ में महत्वपूर्ण रहे। भारत में पर्यावरण आंदोलन का चरित्र अन्य राजनीतिक आंदोलनों से अलग है। इसमें स्थानीय समुदाय अपनी भूमि, जंगल, जलस्त्रोत और

आजीविका की रक्षा के लिए संघर्ष करते हैं। कई बार उनका विरोध किसी राष्ट्रीय राजनीतिक विचारधारा के बजाय स्थानीय जीवन और संसाधनों से जुड़ा होता है। ग्रामीण तथा आदिवासी क्षेत्रों में ऐसे आंदोलनों ने विकास के मॉडल पर महत्वपूर्ण सवाल उठाए- क्या सड़क, खनन, बाँध या उद्योग की परियोजना अपने आप विकास का पर्याय है? विकास की लागत कौन उठाता है? विस्थापित लोगों का पुनर्वास कितना प्रभावी है? पर्यावरणीय स्वीकृति की प्रक्रिया कितनी पारदर्शी है? इन प्रश्नों का महत्व इसलिए बढ़ा है क्योंकि मोदी सरकार ने बुनियादी ढाँचे और औद्योगिक विकास को अपनी आर्थिक रणनीति का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाया है।

2018 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण कानून से संबंधित सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के बाद देश के विभिन्न हिस्सों में बड़े पैमाने पर दलित प्रदर्शन हुए। आंदोलनकारियों को आशंका थी कि न्यायालय के निर्णय से कानून कमजोर हो जाएगा। इसके विरोध में अप्रैल 2018 में भारत बंद का आयोजन किया गया। इन प्रदर्शनों के दौरान कई स्थानों पर हिंसा भी हुई और लोगों की मृत्यु हुई। केंद्र सरकार ने बाद में कानून में संशोधन कर मूल प्रावधानों को अधिक प्रभावी ढंग से बहाल करने की दिशा में कदम उठाया। यह आंदोलन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण था कि उसने दिखाया कि सामाजिक न्याय के मुद्दे केवल संसद या राजनीतिक दलों के एर्धेडे तक सीमित नहीं हैं। दलित समुदाय के विभिन्न संगठनों ने स्वयं को संगठित करके सरकार और न्यायिक व्यवस्था पर दबाव बनाया। साथ ही इस आंदोलन ने यह भी स्पष्ट किया कि जनआंदोलन जब व्यापक स्तर पर फैलते हैं तो शांतिपूर्ण विरोध और हिंसक घटनाओं के बीच अंतर बनाए रखना बड़ी चुनौती बन जाता है।

सोशल मीडिया और आंदोलन की नई राजनीति

मोदी सरकार के दौर के आंदोलनों की एक महत्वपूर्ण विशेषता सोशल मीडिया का अभूतपूर्व इस्तेमाल रहा। फेसबुक, ट्विटर/X, यूट्यूब, इंस्टाग्राम और व्हाट्सऐप जैसे माध्यमों ने आंदोलनकारी समूहों को अपनी बात सीधे जनता तक

आंदोलनों से घिरी रही सरकारें

इंदिरा गांधी सरकार

1970 के दशक में इंदिरा गांधी सरकार के खिलाफ बहुत बड़े राजनीतिक जन आंदोलन हुए। जेपी आंदोलन (1974-75) इसका सबसे बड़ा उदाहरण था। बिहार से शुरू हुआ आंदोलन गुजरात के नवनिर्माण आंदोलन से जुड़ा और बाद में भ्रष्टाचार, महँगाई, बेरोजगारी तथा सरकार के खिलाफ व्यापक राजनीतिक आंदोलन में बदल गया। इसी राजनीतिक संकट की पृष्ठभूमि में 1975 में आपातकाल लगा। इसलिए सरकार विरोधी व्यापक राजनीतिक लामबंदी की तीव्रता के आधार पर इंदिरा गांधी का दौर सबसे महत्वपूर्ण उदाहरणों में आता है।

UPA सरकार

2004-2014 की UPA सरकार के दौरान भी कई बड़े आंदोलन हुए। 2011 का अन्ना हजारे का भ्रष्टाचार-विरोधी आंदोलन, 2012 का निर्भया आंदोलन, अलग-अलग समय पर किसान, मजदूर और भूमि-अधिकार आंदोलन, महँगाई और भ्रष्टाचार के खिलाफ व्यापक राजनीतिक विरोध। 2011 का अन्ना आंदोलन विशेष रूप से विशाल था। लाखों लोग देश के विभिन्न हिस्सों में सड़कों पर उतरे और लोकपाल कानून की मांग राष्ट्रीय राजनीति का केंद्रीय मुद्दा बन गई। इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर बड़े आंदोलनों की संख्या और राजनीतिक प्रभाव के मामले में UPA-2 को भी सबसे महत्वपूर्ण अवधियों में रखा जा सकता है।

नरेंद्र मोदी सरकार

2014-2026 के मोदी सरकार के दौर में भी कई बड़े जनआंदोलन हुए। भूमि अधिग्रहण के खिलाफ आंदोलन, दलित आंदोलन, CAA-NRC विरोध, शाहीन बाग, 2020-21 का किसान आंदोलन, अग्निपथ विरोध, पहलवानों का आंदोलन, विभिन्न भर्ती और पेपरलीक विरोध, 2026 का Gen-Z आंदोलन। इनमें किसान आंदोलन सबसे महत्वपूर्ण है। यह लगभग एक साल चला और अंततः सरकार को तीनों कृषि कानून वापस लेने पड़े। 2026 में Gen-Z आंदोलन भी मोदी सरकार के लिए बड़ा राजनीतिक दबाव बना और शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान के इस्तीफे तक पहुँचा।

पहुँचाने की सुविधा दी। किसान आंदोलन के दौरान आंदोलनकारियों ने अपने मीडिया प्लेटफॉर्म बनाए। CAA विरोधी आंदोलन में सोशल मीडिया के माध्यम से कार्यक्रमों और भाषणों का प्रसार हुआ। अग्निपथ आंदोलन में युवाओं ने ऑनलाइन नेटवर्क के माध्यम से तेजी से सूचनाएँ साझा कीं। इसका सकारात्मक पक्ष यह है कि मीडिया संस्थानों पर निर्भरता कम हुई और सामान्य नागरिक अपनी आवाज सीधे व्यक्त कर सका। लेकिन इसका नकारात्मक पक्ष भी है। सोशल मीडिया पर गलत सूचना, अधूरी जानकारी, संपादित वीडियो और अफवाहें बहुत तेजी से फैलती हैं। इससे आंदोलनों में ध्रुवीकरण और अविश्वास बढ़ सकता है। आज जन आंदोलन केवल सड़क पर नहीं बल्कि डिजिटल मंचों पर भी लड़े जाते हैं। इसे डिजिटल जन आंदोलन के उभरते स्वरूप के रूप में देखा जा सकता है।

जन आंदोलनों और राजनीतिक दलों का संबंध

मोदी सरकार के दौरान लगभग हर बड़े आंदोलन पर यह आरोप-प्रत्यारोप हुआ कि उसके पीछे विपक्षी राजनीतिक दल हैं।

सरकार समर्थकों ने कई आंदोलनों को राजनीतिक रूप से प्रेरित बताया, जबकि आंदोलनकारियों ने कहा कि राजनीतिक दलों का समर्थन मिलना आंदोलन को राजनीतिक दल का आंदोलन नहीं बना देता। वास्तविकता अक्सर दोनों के बीच होती है। लोकतांत्रिक राजनीति में राजनीतिक दल स्वाभाविक रूप से सामाजिक असंतोष को अपने पक्ष में उपयोग करने की कोशिश करते हैं। दूसरी ओर आंदोलनकारी समूह भी राजनीतिक दलों के समर्थन से अपने दबाव को बढ़ा सकते हैं। किसान आंदोलन में विपक्षी दलों ने समर्थन दिया, लेकिन आंदोलन का नेतृत्व मुख्यतः किसान संगठनों के हाथ में रहा। शाहीन बाग में भी राजनीतिक दलों के समर्थक मौजूद थे, लेकिन आंदोलन की सामाजिक छवि मुख्यतः स्थानीय नागरिकों और महिलाओं की बनी। इसलिए किसी आंदोलन की प्रकृति निर्धारित करने के लिए केवल यह देखना पर्याप्त नहीं कि कौनसा राजनीतिक दल उसे समर्थन दे रहा है। यह देखना अधिक महत्वपूर्ण है कि आंदोलन की मांगें क्या हैं, नेतृत्व किसके हाथ में है और सहभागी कौन हैं।

जन आंदोलन और न्यायपालिका

कई आंदोलनों के प्रश्न न्यायपालिका तक भी पहुँचे। शाहीन बाग में सार्वजनिक मार्ग और प्रदर्शन के अधिकार से संबंधित प्रश्नों पर सर्वोच्च न्यायालय में सुनवाई हुई। कृषि कानूनों के मामले में भी सर्वोच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप किया और विशेषज्ञ समिति गठित की। इससे स्पष्ट होता है कि भारत में जनआंदोलन केवल सड़क की राजनीति नहीं हैं। वे संसद, न्यायपालिका, मीडिया और चुनावी राजनीति के साथ लगातार संवाद करते हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था में इन सभी संस्थाओं के बीच संतुलन आवश्यक है। जब संसद कानून बनाती है, जनता विरोध करती है और न्यायपालिका संवैधानिकता की समीक्षा करती है, तो लोकतंत्र के विभिन्न अंग एक-दूसरे पर नियंत्रण और प्रभाव डालते हैं।

क्या जनआंदोलन भारतीय लोकतंत्र की कमजोरी हैं या ताकत?

यदि आंदोलन शांतिपूर्ण हैं, स्पष्ट मांगें रखते हैं, नागरिकों के अधिकारों का सम्मान करते हैं और सरकार संवाद के लिए तैयार रहती है, तो वे लोकतंत्र की ताकत हैं। यदि आंदोलन हिंसा, तोड़फोड़, धमकी या सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाने का माध्यम बन जाते हैं, तो वे लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कमजोर करते हैं। इसी प्रकार यदि सरकार हर असहमति को राष्ट्र-विरोध या राजनीतिक षड्यंत्र बताकर खारिज कर दे, तो लोकतंत्र कमजोर होता है। और यदि आंदोलनकारी हर सरकारी कार्रवाई को दमन मानकर संवाद की संभावना समाप्त कर दें, तब भी लोकतांत्रिक व्यवस्था कमजोर होती है। लोकतंत्र का वास्तविक मूल्य इसी में है कि विरोध और शासन दोनों एक-दूसरे के अस्तित्व को स्वीकार करें।

भविष्य के लिए सबक

मोदी सरकार के दौर के जनआंदोलनों से केंद्र और राज्य सरकारों के लिए कई सबक निकलते हैं। पहला, बड़े नीतिगत बदलावों से पहले व्यापक परामर्श आवश्यक है। दूसरा, संसद में कानून पारित करना लोकतांत्रिक वैधता का महत्वपूर्ण हिस्सा है, लेकिन सामाजिक स्वीकार्यता के लिए हितधारकों से संवाद भी आवश्यक है। तीसरा, आंदोलनकारियों को भी शांतिपूर्ण और अनुशासित विरोध की सीमा बनाए रखनी चाहिए। चौथा, सोशल मीडिया पर गलत सूचना से बचने के लिए तथ्य, जाँच और जिम्मेदार संवाद जरूरी है। पाँचवाँ, रोजगार, कृषि, शिक्षा और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों पर सरकारों को केवल आर्थिक आँकड़ों के आधार पर नहीं बल्कि नागरिकों के वास्तविक अनुभवों के आधार पर भी नीति बनानी चाहिए। छठा, लोकतंत्र में असहमति को समाप्त करना लक्ष्य नहीं होना चाहिए। लक्ष्य यह होना चाहिए कि असहमति को संस्थागत और शांतिपूर्ण संवाद में बदला जाए।

मध्यप्रदेश में नेतृत्व परिवर्तन की अटकलों से फिर गरमाई सियासत

बीजेपी के वरिष्ठ नेताओं को साधने में नाकाम मोहन यादव

विजया पाठक

मध्यप्रदेश की राजनीति में मुख्यमंत्री पद को लेकर एक बार फिर सियासी चर्चाओं का दौर तेज होता दिखाई दे रहा है। मंत्रालय के गलियारों से लेकर भाजपा के संगठनात्मक स्तर तक मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव के नेतृत्व और संभावित बदलाव को लेकर तरह-तरह की अटकलें लगाई जा रही हैं। हालांकि, ऐसा माहौल दिखाई नहीं दे रहा है। लेकिन इतना जरूर है कि मोहन यादव की कार्यशैली प्रदेश की जनता को प्रभावित नहीं कर पा रही है। किसान, युवा, व्यापारी वर्ग सरकार से नाराज दिखाई दे रहा है। खासकर किसान के मुद्दे पर सरकार विफल साबित हुई है। वहीं दतिया उपचुनाव में मिली हार से भी नकारात्मक माहौल बना है। ऐसे में यह सवाल राजनीतिक गलियारों में चर्चा का विषय जरूर बन गया है कि यदि कभी नेतृत्व परिवर्तन की स्थिति बनती है तो पार्टी की पहली पसंद कौन होगा? अब लंबे समय बाद मुख्यमंत्री परिवर्तन की चर्चाओं का फिर उभरना अपने आप में राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण माना जा रहा है।

क्या मोहन यादव से पार्टी में नाराजगी है?

मुख्यमंत्री परिवर्तन की चर्चाओं के बीच सबसे बड़ा सवाल यही है कि आखिर डॉ.

मोहन यादव को लेकर पार्टी के भीतर असंतोष कितना वास्तविक है? राजनीतिक चर्चाओं में कुछ वरिष्ठ नेताओं और मंत्रियों के बीच मतभेदों का उल्लेख किया जा रहा है। कैलाश विजयवर्गीय, प्रहलाद पटेल, राकेश सिंह, नरोत्तम मिश्रा और नरेन्द्र सिंह तोमर जैसे वरिष्ठ नेताओं के नाम भी इन चर्चाओं के साथ जोड़े जा रहे हैं। हालांकि, किसी नेता की सार्वजनिक राजनीतिक गतिविधि, प्रशासनिक निर्णयों पर असहमति या बयान को सीधे मुख्यमंत्री के खिलाफ बगावत अथवा नेतृत्व परिवर्तन की मांग मान लेना उचित नहीं होगा। भाजपा जैसे बड़े संगठन में अलग-अलग नेताओं की अपनी राजनीतिक भूमिका और प्रशासनिक प्राथमिकताएं होती हैं। कई बार सामान्य राजनीतिक मतभेदों को भी नेतृत्व परिवर्तन की संभावनाओं से जोड़कर देखा जाने लगता है। इसके बावजूद यदि संगठन और सरकार के बीच समन्वय को लेकर लगातार सवाल उठते हैं तो शीर्ष नेतृत्व के लिए यह निश्चित रूप से चिंता का विषय हो सकता है। भाजपा का केंद्रीय नेतृत्व राज्यों में सरकार और संगठन के बीच बेहतर तालमेल को हमेशा प्राथमिकता देता रहा है।

कार्यकर्ताओं की नाराजगी भी बड़ा मुद्दा

राजनीतिक समीकरणों में केवल मंत्रियों और वरिष्ठ नेताओं की भूमिका महत्वपूर्ण नहीं होती, बल्कि जमीनी कार्यकर्ताओं का रुख भी काफी मायने रखता है। मध्यप्रदेश भाजपा का संगठन लंबे समय से मजबूत कैडर और बूथ स्तर के नेटवर्क के लिए जाना जाता है। ऐसे में यदि कार्यकर्ताओं के बीच असंतोष की कोई वास्तविक स्थिति बनती है तो पार्टी संगठन उसे गंभीरता से ले सकता है। लेकिन कार्यकर्ताओं की कथित नाराजगी को व्यापक संगठनात्मक असंतोष मानने से पहले उसके प्रमाण और वास्तविक राजनीतिक प्रभाव का आकलन जरूरी होगा। चुनावी राजनीति में टिकट, पद, स्थानीय नेतृत्व और प्रशासनिक अपेक्षाओं को लेकर असंतोष समय-समय पर सामने आता रहता है।

शीर्ष नेतृत्व के सामने असली चुनौती

भाजपा के केंद्रीय नेतृत्व के लिए मध्यप्रदेश में सबसे बड़ी चुनौती राजनीतिक स्थिरता और संगठनात्मक संतुलन बनाए रखना है। मुख्यमंत्री बदलना केवल किसी एक व्यक्ति को हटाने या नए व्यक्ति को नियुक्त करने का निर्णय नहीं होता। इसके साथ मंत्रिमंडल, संगठन, क्षेत्रीय समीकरण, जातीय संतुलन और आगामी चुनावी रणनीति जैसे कई पहलू जुड़े होते हैं। मध्यप्रदेश भाजपा के सामने यदि नेतृत्व परिवर्तन का कोई विकल्प कभी आता है तो उसे यह भी देखना होगा कि मौजूदा मुख्यमंत्री के कार्यकाल की राजनीतिक स्वीकार्यता क्या है और बदलाव का चुनावी लाभ कितना मिल सकता है। बिना स्पष्ट राजनीतिक लाभ के नेतृत्व परिवर्तन करना पार्टी के लिए जोखिम भरा कदम हो सकता है।

केन्द्रीय नेतृत्व की निगाहों में प्रदेश की हलचल

मौजूदा स्थिति को 'नेतृत्व परिवर्तन की संभावनाओं पर चल रही राजनीतिक चर्चा' के रूप में देखना ज्यादा उचित होगा। आने वाले दिनों में भाजपा संगठन की गतिविधियां, केंद्रीय नेतृत्व के फैसले, मुख्यमंत्री के कार्यक्रम और वरिष्ठ नेताओं के बयानों पर राजनीतिक नजरें टिकी रहेंगी। यदि पार्टी नेतृत्व की ओर से कोई आधिकारिक संकेत सामने आता है तो वर्तमान चर्चाओं को नई दिशा मिल सकती है। तब यह साफ होगा कि मध्यप्रदेश भाजपा केवल राजनीतिक अटकलों के दौर से गुजर रही है या वास्तव में प्रदेश के नेतृत्व को लेकर कोई बड़ा फैसला आकार ले रहा है। फिलहाल मध्यप्रदेश की सियासत में सबसे बड़ा सवाल यही है क्या यह केवल सत्ता के गलियारों में उठी अफवाहों की लहर है या भाजपा के भीतर किसी बड़े राजनीतिक बदलाव की आहट? इसका जवाब आने वाले समय में ही स्पष्ट होगा।

महिला नेतृत्व की चर्चा ने बढ़ाया सस्पेंस

प्रदेश में महिला चेहरे का नाम भी सामने आने की बात कही जा रही है। इसी क्रम में पूर्व मंत्री इमरती देवी ने कृष्णा गौर का नाम राजनीतिक गलियारों में चर्चा का विषय बना दिया है। लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में कृष्णा गौर का नाम फिलहाल अटकलों के दायरे में ही है।

छत्तीसगढ़ के 2161 करोड़ के शराब घोटाले में सनसनीखेज खुलासे

बोतल में बंद शराब घोटाले के जिन्न कटघरे में प्रदेश की जांच एजेंसियां

शराब घोटाले में ज्ञात/अज्ञात/संदेही/आरोपी लगभग नामजद 70 लोगों के खिलाफ एवं अन्य के विरूद्ध एफआईआर दर्ज किया गया, जिस पर शुरूआती दौर में अनेकों लोगों के खिलाफ दण्डात्मक कार्यवाही की गई, जिसमें नामजद लोगों की गिरफ्तारी व उन्हें जेल भेजने तक की कार्यवाही की गई। कुछ समय उपरांत ईओडब्ल्यू/एसीबी रायपुर एवं ईडी रायपुर के अधिकारी एवं कर्मचारी उपरोक्त मामले को ज्ञात/अज्ञात आरोपियों से सांठगांठ एवं उनसे मिलकर इस मामले में संलिप्त लोगों को बचाने, छोड़ने का खेल चालू हो गया। आशीष श्रीवास्तव 2161 करोड़ के शराब घोटाले के मुख्य कर्ताधर्ता थे। उनको ईओडब्ल्यू/एसीबी रायपुर एवं ईडी रायपुर द्वारा आज दिनांक तक उनसे इन अपराधों के संबंध में कोई पूछताछ नहीं की गई।

विजया पाठक

भूपेश सरकार के समय हुए 2161 करोड़ के शराब घोटाले में कई सनसनीखेज खुलासे सामने आ रहे हैं। इस घोटाले में 70 लोग अपराधी हैं। जिनमें से कुछ अपराधियों को राज्य की जांच एर्जेसियां बचाने में लगी हुई हैं। सूत्रों का कहना है कि 48 नंबर के अपराधी सिद्धार्थ सिंघानिया को ईओडब्ल्यू सरकारी गवाह बनाने वाली है। जिसके लिए सिद्धार्थ सिंघानिया ने 05 करोड़ की रिश्वत दी है। वहीं घोटाले के प्रमुख अपराधी आशीष सिंह, वैभव मित्तल और आशीष श्रीवास्तव को भी जांच एर्जेसियां बचाने में लगी हैं। यह लोग भूपेश सरकार को पैसा कमाकर देते थे। बताया यह भी जा रहा है कि बीजेपी सरकार में भी कुछ नेता इन लोगों से पैसा ले रहे हैं। शराब घोटाले में ज्ञात/अज्ञात/संदेही/आरोपी लगभग नामजद 70 लोगों के खिलाफ एवं अन्य के विरूद्ध एफआईआर दर्ज किया गया, जिस पर शुरूआती दौर में अनेकों लोगों के खिलाफ दण्डात्मक कार्यवाही की गई, जिसमें नामजद लोगों की गिरफ्तारी व उन्हें जेल भेजने तक की कार्यवाही की गई। कुछ समय उपरांत ईओडब्ल्यू/एसीबी रायपुर एवं ईडी रायपुर के अधिकारी एवं कर्मचारी उपरोक्त मामले को ज्ञात/अज्ञात आरोपियों से सांठगांठ एवं उनसे मिलकर इस मामले में संलिप्त लोगों को बचाने, छोड़ने का खेल चालू हो गया। आशीष श्रीवास्तव 2161 करोड़ के शराब घोटाले के मुख्य कर्ताधर्ता थे। उनको ईओडब्ल्यू/एसीबी रायपुर एवं ईडी रायपुर द्वारा आज दिनांक तक उनसे इन अपराधों के संबंध में कोई पूछताछ नहीं की गई। न ही उन्हें गिफ्तार कर न्यायालय में पेश किया गया। आबकारी विभाग के द्वारा भी उनके विरूद्ध आज दिनांक तक कोई कार्यवाही नहीं की गई है, जिससे स्पष्ट होता है कि जांच एर्जेसियां भी सांठगांठ/मिलीभगत एवं भ्रष्टाचार कर उससे लगातार बचाया जा रहा है।

प्रमुख अपराधी सिद्धार्थ सिंघानिया, आशीष सिंह, वैभव मित्तल और आशीष श्रीवास्तव कटघरे में

सिंडीकेट के माध्यम से होता था पैसों का लेन-देन

सूत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार छत्तीसगढ़ में अनिल टुटेजा, संयुक्त सचिव, वाणिज्य एवं उद्योग विभाग द्वारा अनवर ढेबर, अरूणपति त्रिपाठी विशेष सचिव, आबकारी विभाग एवं एमडी छत्तीसगढ़ राज्य मार्केटिंग कार्पोरेशन लिमिटेड रायपुर के साथ सिंडिकेट के रूप में कार्य कर अनवर ढेबर के सहयोगी विकास अग्रवाल, अरविंद सिंह, संजय दीवान, देशी शराब

70 अपराधियों में से कई को बचाने में जुटी जांच एजेंसियां

आसवनी मालिक तथा जिला मुख्यालयों में पदस्थ आबकारी अधिकारियों के साथ मिलकर राज्य में मदिरा की बिक्री में अवैधानिक कमीशन की उगाही कर तथा बिना हिसाब के मदिरा की शासकीय मदिरा दुकानों में सप्लाई कर लगभग 2161 करोड़ रूपये की अवैध कमाई की गयी है। इसी अवैध रकम से उच्च पदस्थ अधिकारी अनिल टुटेजा, अरूणपति त्रिपाठी एवं अनवर ढेबर द्वारा बहुत सारी अचल संपत्ति अर्जित की गयी है, जिसे ईडी द्वारा प्राविजनल अटैचमेंट आदेश क्रमांक 03/2023 के तहत अटैच भी किया गया है। ईडी द्वारा आयकर विभाग से प्राप्त सूचना के आधार पर ईसीआईआर क्रमांक 11/2022 पंजीबद्ध कर जांच की गयी तथा पीएमएलए एक्ट 2002 की धारा 3 एवं 4 के तहत कार्यवाही कर अनवर ढेबर, अरूणपति त्रिपाठी एवं अन्य को विशेष न्यायालय (पीएमएलए एक्ट) रायपुर में पेश कर रिमाण्ड प्राप्त किया गया है। जिसका प्रकरण लंबित है। सूत्रों से प्राप्त प्रमाणिक जानकारी के अनुसार छत्तीसगढ़ में देशी मदिरा के निर्माणकर्ता आसवनी मेसर्स छत्तीसगढ़ डिस्टलरीस लिमिटेड, मेसर्स भाटिया वाईन मर्चेंट प्रायवेट लिमिटेड एवं वेलकम डिस्टलरिस प्रायवेट लिमिटेड है, जिन्हें राज्य में देशी मदिरा प्रदाय करने का लाईसेन्स प्राप्त है। अनवर ढेबर द्वारा अनिल टुटेजा से अपने पारिवारिक संबंध एवं राजनितिक प्रभाव का लाभ लेते हुए सीएसएमसीएल के प्रबंध संचालक अरूणपति त्रिपाठी के साथ मिलकर शराब निर्माता आसवनी से शराब निर्माण कर उपलब्ध कराने के रेट में बढ़ोतरी करने जिसके एवज में आसवनी मालिकों से लाखों रूपयों का अवैध कमीशन प्राप्त किया गया। ईडी ने इसे पार्ट-ए के भ्रष्टाचार के रूप में दर्शित किया है कि व्यवस्था के समानांतर नयी व्यवस्था बनाकर आसवनी संचालकों से बिना रिकार्ड के देशी मदिरा इसी तरह देशी मदिरा के सप्लाई हेतु राज्य में

ननकीराम ने लिखा प्रधानमंत्री और गृहमंत्री को पत्र

ननकी राम कंवर

पूर्वमंत्री ननकीराम ने प्रधानमंत्री एवं केन्द्रीय गृहमंत्री को पत्र लिखकर आशीष श्रीवास्तव, तत्कालीन अतिरिक्त आयुक्त रायपुर एवं सिद्धार्थ सिंघानिया को एर्जेसियों द्वारा बचाने एवं क्लीनचिट देने पर कार्यवाही करने की मांग की गई है। उन्होंने लिखा है कि निर्देश के बाद भी ईओडब्ल्यू/एसीबी एवं ईडी द्वारा कार्यवाही नहीं की जा रही है। और अपराधियों को बचाया जा रहा है।

बनायी गयी शासकीय शराब दुकानों का निर्माण कराकर डुप्लीकेट होलोग्राम लगाकर शासकीय मदिरा दुकानों के माध्यम से पृथक से बिक्री कराकर उससे करोड़ों रूपयों की अवैध कमाई की गयी है। इस कृत्य में आसवनी मालिकों, बोतल सप्लाईकर्ता एर्जेसी, डुप्लीकेट होलोग्राम प्रदायकर्ता एर्जेसी, बी-पार्ट की शराब बिक्री के पैसे कलेक्ट करने वाली एर्जेसी, आबकारी विभाग के अधिकारी, अरूणपति त्रिपाठी के संलिप्त रहे हैं। ईडी द्वारा इसे बी-पार्ट के कमीशन के रूप में आरोपित किया गया है। इस प्रकार के विकय वर्ष 2019-2020, 2020-21, 2021-2022 में किया गया। इस अवैध मदिरा की बिक्री से

सिद्धार्थ सिंघानिया को अपराधी से शासकीय गवाह बना रही जांच एर्जेसियां

प्राप्त अवैध वसूली राशि का कार्य विकास अग्रवाल के माध्यम से किया जाता था, जो अनवर ढेबर एवं अरूणपति त्रिपाठी को इसकी जानकारी देता था। सूत्रों के अनुसार प्रतिमाह लगभग 200 ट्रक, जिसमें प्रति ट्रक लगभग 800 मदिरा के केस होते थे जो कि शराब निर्माताओं द्वारा सिंडीकेट को प्रदान किये जाते थे। सूत्रों के अनुसार 2019-2020 में अवैध मदिरा 560 रू. प्रति प्रकरण के हिसाब से शराब निर्माताओं से प्राप्त की जाती थी, जिसे 2880 रू. एमआरपी पर बेचा जाता था, जो बाद में 3880 रूपये तक बेचा गया। इस सम्पूर्ण कार्य के लिए शराब निर्माताओं को 560-600 रूपये प्रति केस तथा आबकारी

अधिकारियों को लगभग 150 रू. प्रति केस दिया जाता था। शेष सम्पूर्ण राशि अनवर ढेबर द्वारा विकास अग्रवाल उर्फ सूब्बू के माध्यम से ली जाती थी। सूत्रों के अनुसार इसी राशि का लगभग 15 प्रतिशत शेयर अनिल टुटेजा एवं अनवर ढेबर स्वयं रख लेते थे तथा शेष हिस्सा राजनेताओं को बाँट देते थे। राशि लेने-देने का कार्य भी अनवर ढेबर एवं उसके अधीनस्थ लोगों द्वारा किया जाता था।

शराब घोटाले के मुख्य आरोपी

डुप्लीकेट होलोग्राम लगी मदिरा विक्रय का कारोबार प्रदेश के रायपुर, दुर्ग, बिलासपुर, राजनांदगांव, कबीरधान, बालोद, महासमुंद, धमतरी, बलौदाबाजार, गरियाबंद, मुंगेली, जांजगीर-चांपा, कोरबा, बेमेतरा एवं रायगढ़ जिलों में किया जाता रहा है। डुप्लीकेट होलोग्राम लगी मदिरा की सप्लाई में आबकारी विभाग के तत्समय पदस्थ जनार्दन कौरव, सहायक जिला आबकारी अधिकारी रायपुर, अनिमेष नेताम, डिप्टी कमिश्नर आबकारी धमतरी, विजय सेन शर्मा, डीप्टी कमिश्नर आबकारी, महासमुंद, प्रमोद कुमार नेताम, सहायक आयुक्त आबकारी, रामकृष्ण मिश्रा, सहायक आबकारी आयुक्त, विकास गोस्वामी, सहायक आबकारी आयुक्त, इकबाल खान, जिला आबकारी अधिकारी, नितिन खंडुजा, जिला आबकारी अधिकारी, नवीन प्रताप सिंह तोमर, सहायक आयुक्त आबकारी, मंजुश्री कसेर, जिला आबकारी

भूपेश सरकार में हुए शराब घोटाले में प्रमुख सूत्रधारों पर जांच एजेंसियों का शिकंजा

अधिकारी, सौरभ बख्शी, सहायक आयुक्त आबकारी, दिनकर वासनिक, सहायक आयुक्त आबकारी, आशीष श्रीवास्तव, अतिरिक्त आयुक्त आबकारी मुख्यालय, अशोक सिंह, जिला आबकारी अधिकारी, मोहित जायसवाल, जिला आबकारी अधिकारी, नीतू नोतानी, उपायुक्त आबकारी, रविश तिवारी, सहायक जिला आबकारी अधिकारी, गरीबपाल दर्दी, सहायक जिला आबकारी अधिकारी, नोहर सिंह ठाकुर, आबकारी अधिकारी, सोनल नेताम, सहायक आयुक्त की संलिप्तता पायी गयी है। उक्त संपूर्ण सिंडीकेट के मुख्य भूमिका सीएसएमसीएल के तत्कालीन प्रबंध संचालक अरूणपति त्रिपाठी द्वारा की गयी है, जिनके द्वारा आसवनी मालिकों की होटल वेनिंगटन में अनवर ढेबर से मुलाकात कराकर मदिरा के रेट में बढ़ोतरी किये जाने उसके एवज में भारी मात्रा में कमीशन देने हेतु दबाव बनाया गया। मेसर्स प्रीज्म होलोग्राम एण्ड सिक्योरिटीस प्राई. लिमिटेड के विधु गुप्ता से डुप्लीकेट होलोग्राम सप्लाई

हेतु योजनाबद्ध तरीके से टेण्डर दिलवाकर पूर्व में इस्तेमाल हो चुके होलोग्राम के नंबर पर ही डुप्लीकेट होलोग्राम तैयार कराकर उसके अधीनस्थ दिपक दुवारी से सहायक आयुक्त आबकारी जनार्दन कौरव के माध्यम से आसवनी मालिकों तक पहुंचाने की व्यवस्था करायी गयी। अरूणपति त्रिपाठी को उपरोक्त अपराधिक कृत्य से करोड़ो की अवैध राशि प्राप्त होने की जानकारी मिली है, जिसमे से लगभग 20 करोड़ के अवैध रकम डुप्लीकेट होलोग्राम युक्त देशी मदिरा बिक्री से कमीशन बतौर प्राप्त हुयी है। सचिव निरंजनदास के कार्यकाल में विदेशी मदिरा निर्माताओं से रिश्वत उगाही हेतु तत्कालीन सहायक आयुक्त, आबकारी, मंजुश्री कसेर, तत्कालीन जिला आबकारी अधिकारी, सौरभ बख्शी, तत्कालीन सहायक आयुक्त, दिनकर वासनिक, तत्कालीन सहायक आयुक्त आबकारी, आशीष श्रीवास्तव, तत्कालीन अतिरिक्त आयुक्त, आबकारी, अशोक कुमार सिंह, तत्कालीन जिला आबकारी अधिकारी, मोहित कुमार जायसवाल, जिला आबकारी अधिकारी, श्रीमती नीतू नोतानी, उपायुक्त, रविश तिवारी, तत्कालीन सहायक आयुक्त आबकारी, गरीबपाल दर्दी, आबकारी अधिकारी, नोहर सिंह ठाकुर, आबकारी अधिकारी, श्रीमती सोनल नेताम, सहायक आयुक्त, आबकारी विभाग, अरविंद सिंह, अनुराग द्विवेदी, मेसर्स अनुराग ट्रेडर्स, अमित सिंह मेसर्स अदीप एग्रोटेक प्राईवेट लिमिटेड, नवनीत गुप्ता, श्रीमती पिंकी सिंह, प्रोप्राईटर अदिप एम्पायर्स, विकास अग्रवाल उर्फ सुब्बू, त्रिलोक सिंह, ढिल्लन, मेसर्स ढिल्लन सिटी मॉल प्राईवेट लिमिटेड, यश टुटेजा, निवासी कटोरा तालाब रायपुर, नितेश पुरोहित, गिरीराज होटल, रायपुर, यश पुरोहित, गिरीराज होटल, रायपुर, अभिषेक सिंड डायरेक्टर मेसर्स नेक्सजेन पॉवर इंजीटेक प्राईवेट लिमिटेड, मनीष मिश्रा, मेसर्स नेक्सजेन पॉवर इंजीटेक प्राईवेट लिमिटेड, संजय कुमार मिश्रा, सीए मेसर्स नेक्सजेन पॉवर इंजीटेक प्राईवेट लिमिटेड, अतुल कुमार सिंह ओम साई, बेवरेजेत्त प्राईवेट लिमीटेड, मुकेश मनचंदा, ओन साईं, बेवरेजेस प्राईवेट लिमिटेड, विजय भाटिया, भिलाई, आशीष सौरभ केडिया, मेसर्स दिशिता वेंचर्स प्राईवेट लिमिटेड मेसर्स छत्तीसगढ़ डिस्टलरीस प्राईवेट लिमिटेड, मेसर्स भाटिया वाईन एवं मर्चेटस प्राईवेट लिमिटेड, मेसर्स वेलकम डिस्टलरीस, सिद्धार्थ सिंघानिया, मेत्सर्स सुमित फैसलिटीस लिमीटेड एवं टॉप सिक्योरिटीस फैसलिटीस मैनेजमेंट, बच्चा राज लोहिया मेसर्स इगल हंटर सॉल्युशन लिमिटेड एवं पार्टनर, मेसर्स अलर्ट कमाण्डो प्राईवेट लिमिटेड एवं पार्टनर, अमित मित्तल, मेसर्स ए-टू-जेड प्राईवेट लिमिटेड एवं सहयोगी, उद्यत्राव मेसर्स ए-टू-जेड प्राईवेट लिमिटेड का मैनेजर, मेसर्स प्राईम वन वर्क फोर्स, लक्ष्मीनारायण बंसल उर्फ पप्पू बंसल निवासी भिलाई, विधु गुप्ता, प्रीज्म होलोग्राफी एवं सिक्योरिटीस प्रा.लि., दीपक दुआरी, दिपेन चावड़ा, मेसर्स प्राईम डेव्हलपर्स, मेसर्स ए ढेबर बिल्डकॉन, मेसर्स ए.जे.एस. एग्रोट्रेड प्राईवेट लिमिटेड सफायर इस्पात के मालिक उमेर ढेबर एवं जुनैद ढेबर, अख्तर ढेबर, मेसर्स जगदम्बा इंटरप्राईजेस, अशोक सिंह, सुमित मलो, रवि बजाज, विवेक ढांढ, कांग्रेस के पदाधिकारीगण, अन्य आबकारी अधिकारीगण, विकास अग्रवाल के साथीगण एवं अन्य के विरूद्ध प्रकरण में प्रथम दृष्टया भारतीय दण्ड विधान की धारा 420, 467, 468, 471, 120 बी एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 संशोधित अधिनियम 2018 की धारा 7 एवं 12 घटित करना पाये जाने से अपराध पंजीबद्ध कर विवेचना में लिया जाता है।

clarks
inn suites
Luxury redefined

Clarks Inn Suites

Welcome

Clarks Inn Suites, Gwalior, marks a significant milestone in our journey toward excellence. Our hotel is centrally located in Gwalior, making it an ideal choice for business and leisure travelers alike.

The property features 58 well-appointed rooms & suites and offers a range of premium amenities, including: A fine multi-cuisine restaurant. A 24-hour café. A rooftop swimming pool with a stunning fort view. A health club for fitness and wellness. A bar serving both alcoholic and non-alcoholic beverages. A discotheque with a sophisticated sound system and vibrant lighting. Multiple banquet halls and a boardroom for conferences and meetings

Accommodation

The hotel offers 58 elegantly designed rooms across four categories:

- Deluxe Room
- Executive Room
- Executive Suite
- Premier Suite

Each room is equipped with modern amenities to ensure a comfortable and convenient stay.

Dining & Entertainment

Our exclusive in-house multi-cuisine restaurant, The Bridge, offers a carefully curated menu featuring delicacies from various cuisines. Guests can also enjoy 24-hour in-room dining for added convenience.

Meeting & Events

The hotel features three banquet halls and a boardroom, ensuring every event—be it a corporate conference, a grand reception, or an intimate birthday celebration—is a memorable experience.

VENUES FOR DINING AND ENTERTAINMENT:

- Multi Cuisine Restaurant
- Bar
- The Health Club
- The Coffee Shop
- Rooftop Swimming Pool
- Discotheque
- Banquet Hall
- Boardroom

CLARKS INN SUITES
Maharani Laxmibai Road, Phoolbagh, Gwalior, Madhya Pradesh - 474009,
Contact: 7440400603, 7440400630

एथनाल पेट्रोल ने चीनी का बढ़ाया संकट

प्रमोद भार्गव

भारतीय बाजार में गन्ने से एथनाल के निर्माण ने बड़ा संकट खड़ा कर दिया है। इस गंभीर समस्या ने जहां चीनी को उम्मीद से ज्यादा महंगा कर दिया है, वहीं चीनी आयात करने की स्थिति भी पैदा हो गई है। केंद्र सरकार ने 10 साल में पहली बार चीनी आयात करने का फैसला लिया है। चीनी अब डॉलर देकर विदेश से मंगाई जाएगी। जबकि 2022 तक ईयू और यूएस को तय कोटा निर्यात के बाद यह प्रतिबंध लगाना पड़ता था कि अब और चीनी निर्यात नहीं की जाए। जिससे घरेलू मांग की पूर्ति आसान बनी रहे और चीनी महंगी भी न हो। अब यह स्थिति निर्मित हो गई है कि घर-घर में इस्तेमाल की जाने वाली चीनी का भंडार पिछले साल की तुलना में 20 प्रतिशत कम हो गया है। इस कमी का प्रमुख कारण गन्ने का उपयोग एथनाल बनाने में किया जाना माना जा रहा है। भारत में अनाज से शराब पूर्व से ही बनाई जा रही है। खाद्य उपज से पेट्रोल और शराब का बड़ी मात्रा में निर्माण नीति नियंताओं की अदूरदर्शिता प्रकट करती है।

बीते दो माह के भीतर ही चीनी की कीमतें उछलकर 40 प्रतिशत तक बढ़ गई हैं। आगे रक्षाबंधन, गणेश महोत्सव और कृष्ण जन्माष्टमी जैसे बड़े त्यौहार हैं, जिनमें मिठाई और प्रसाद वितरण के लिए शकर की बड़ी मांग बनी रहती है। इसके तत्काल बाद नवदुर्गा, विजयादशमी और दीपावली जैसे बड़े पर्व हैं, जिनमें चीनी की सर्वाधिक खपत होती है। अतएव समय पर चीनी आयात नहीं हो पाती है तो चीनी के दाम आसमान छूने लग जाएंगे। हालांकि सरकार यह जता रही है कि पेट्रोल में एथनाल की

मात्रा बढ़ाने से चीनी महंगी नहीं हुई है, बल्कि खराब मौसम के चलते गन्ने की फसल की कम पैदावार के कारण देश में चीनी का उत्पादन कम हुआ है। सरकार एक अन्य कारण अंतरराष्ट्रीय बाजार में चीनी के दामों में वृद्धि बता रही हैं। बावजूद सरकार ई-20 एथनाल पेट्रोल के उत्पादन पर अंकुश लगाने को तैयार नहीं है। यही कारण है कि सरकार ने ई-10 यानी 10 फीसदी एथनाल मिश्रित पेट्रोल बनाने के सुझावों को सिरे से खारिज कर दिया है।

दरअसल देश में एथनाल उत्पादन की क्षमता तेजी से बढ़कर 2000 करोड़ लीटर प्रतिवर्ष से ज्यादा हो गई है। एथनाल का यह उत्पादन 478 महाराष्ट्र, कर्नाटक और उत्तर प्रदेश में लगे संयंत्रों में किया जा रहा है। जबकि पेट्रोल वाहनों में एथनाल मिला पेट्रोल उपयोग करने से वाहन खराब हो रहे हैं। इस कारण मौजूदा मांग उत्पादन से कम बनी हुई है। बावजूद उदयोगपति एथनाल निर्माण के नए संयंत्रों के निर्माण में लगे हैं। इस सेक्टर को बैंकों ने एक लाख करोड़ रूपए का कर्ज दिया हुआ है। अब सरकार की दुविधा यह है कि यदि पेट्रोल में ब्लेडिंग घटाई गई तो हजारों करोड़ के बैंक ऋण और देशी-विदेशी निवेश डूबने का संकट बढ़ जाएगा। ब्लेडिंग उस प्रक्रिया को कहते हैं, जिसके तहत एक तय मात्रा में बायो फ्यूल, यानी ई-20 या ई-10 प्रतिशत पेट्रोल में एथनाल मिलाया जाता है। हालांकि यह जीवाश्म ईंधन जलवायु परिवर्तन पर अंकुश लगाने के लिए पर्यावरण के अनुकूल है। इस जैव ईंधन को नवीकरणीय ऊर्जा माना जाता है। इस कारण दुनिया के देश जैव ईंधन का उत्पादन बढ़ाने में लगे हैं।

केअर एज रेटिंग्स की रिपोर्ट के अनुसार चालू वित्त वर्ष के अंत तक एथनाल उत्पादन क्षमता 400 करोड़ लीटर और बढ़ जाएगी। अर्थात कुल उत्पादन क्षमता करीब 2400 करोड़ लीटर तक पहुंच जाने

की उम्मीद है। जबकि 2014 में एथनोल का उत्पादन 421 करोड़ लीटर प्रतिवर्ष होता था। जो अब चार गुना अघिक हो गया है। चालू वित्त वर्ष के दौरान पेट्रोल ब्लेंडिंग के लिए ई-20 पेट्रोल के लिए 1200 करोड़ लीटर एथनाल की जरूरत पड़ेगी। यही नहीं उद्योगों, फार्मा कंपनियों और रसायन क्षेत्रों में भी अधिकतम 350 लीटर एथनाल की मांग बनी हुई है। 2025 से देशभर में ई-20 पेट्रोल की बिक्री हो रही है। पश्चिम एशिया में चल रहे अमेरिका-ईरान, रूस-यूक्रेन और इजरायल के युद्धों के चलते केंद्र सरकार ने मजबूरी में अप्रैल-2026 से एथनाल मिश्रित पेट्रोल बाजार में देने की शुरुआत की है। इधर एथनाल के नए संयंत्र लगाए जाने के कारण उद्योग जगत की मांग है कि ई-30 या उससे अधिक एथनाल मिश्रित पेट्रोल की बिक्री देशभर में शुरू की जाए। फिलहाल देश में गन्ना, मक्का और अन्य अनाजों से बने एथनाल के निर्यात पर प्रतिबंध लगाए। क्योंकि यदि खाद्य सामग्री से बना एथनाल निर्यात होने लग जाएगा तो देश में खाने वाला अनाज की आपूर्ति में तो आएगी ही, उम्मीद से ज्यादा अनाज महंगा भी हो जाएगा। हालांकि वर्तमान में कृषि अवशेष और बायोमास से निर्मित एथनाल के निर्यात की अनुमति सितंबर 2025 से दे दी गई है। किंतु उद्योग जगत अपना फायदा देखते हुए मांग कर रहा है कि सरकार नेपाल और इंडोनेशिया देशों में निर्यात की संभावनाएं तलाशे? अनाज, फल और सब्जी आदमी के जिंदा रहने की बुनियादी शर्त हैं। लेकिन आधुनिक जीवन शैली के लिए जरूरी बना दिए गए औद्योगिक उत्पादन और भोग-विलास के उपकरणों को ऊर्जा उपलब्ध कराने के लिए वैकल्पिक स्रोतों में फसलों का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल दुनिया में हो रहा है। खाद्य संकट बनाए रखने के कारणों में यह एक प्रमुख कारण है। यदि जैविक ईंधन के लिए अनाज के प्रयोग को खुली छूट दे दी जाती है तो भारत में भूख का संकट गहराना तय है। वैसे भी वैश्विक भूख सूचकांक में भारत की स्थिति अच्छी नहीं है। यह स्थिति भूख की गंभीर स्थिति दर्शाती है। ऐसे में वाहनों के उत्पादन को बढ़ाना और बैंकों के कर्ज के जरिए उनकी बिक्री आसान करना भूख की स्थिति को और गंभीर बनाएगी।

इस सिलसिले में ब्रिटेन की स्वयंसेवी संस्था ऑक्सफेम ने दुनिया में बढ़ रहे खाद्यान्न संकट के सिलसिले में चेतावनी दी है कि यदि अनाज से शराब और एथनॉल बनाना बंद नहीं किया तो 2030 तक खाद्यान्न की मांग 70 फीसदी तक बढ सकती है और अनाज की कीमतें भी दुगनी हो सकती हैं? बावजूद देश की गरीब व लाचार आबादी की चिंता की बजाय भारत सरकार वाहनों के लिए एथनाल उत्पादन को बढ़ावा दे रही है, तो यह चिंता का विषय है।

देश में उगती विदेशी सभ्यता की दुकानें

रघु ठाकुर

पिछले दिनों भारत सरकार ने यह फैसला किया था कि देश में 100 विदेशी विश्वविद्यालयों को अनुमति देंगे और जून माह तक 15 विदेशी विवि को अनुमति दी जा चुकी है। विदेशी विवि को अनुमति के पीछे औपचारिक कारण या तर्क यह बताया जा रहा है कि जो विद्यार्थी बाहर पढ़ने जाते थे उनके ऊपर औसतन 80 लाख से 1 करोड़ रूपया खर्च होता था और अब यह खर्च बच जायेगा। यह भी कि जो लोग बाहर पढ़ने जाते हैं उनमें से मुश्किल से 1 प्रतिशत विद्यार्थियों को विदेशों में रोजगार मिल पाता है। यह दोनों बातें अपनी जगह सही हो सकती हैं और यह भी है कि अब अमेरिका, ब्रिटेन जैसे देश अपने यहां पढ़ने आने वाले लोगों को स्थाई रूप से बसने में कई प्रकार के प्रतिबंध लगा रहे हैं। जैसे पहले अमेरिका में पढ़ने वाले छात्र के लिए पढ़ाई के बाद वहां रहकर नौकरी तलाशते रहने की समयावधि कई वर्ष थी परंतु अब अमेरिका ने घटाकर 1 से 3 माह कर दी और इतने में अगर नौकरी नहीं मिलती है तो उन्हें देश वापिस आना होगा। वीजा नियमों में भी काफी सख्ती की जा रही है और उसका कारण है कि अब अमेरिका भी बाहर से आने वालों के बोझ सहने से मुक्त होना चाहता है तथा अमेरिका की बढ़ती बेरोजगारी को दूर करने के लिये अमेरिकी नौजवानों को अघोषित पात्रता देना चाहती है। श्री डोनाल्ड ट्रंप के इस दूसरे कार्यकाल में फिर से वह पुराना नारा दुहराया जाने लगा है। अमेरिकन फर्स्ट या वी अमेरिकन, बाय अमेरिकन। इतना ही

नहीं अब बाहर के देशों से गये हुये लोग अपने आपको पहले जैसा सुरक्षित नहीं मानते हैं। क्योंकि पिछले वर्षों में हेट क्राइम की घटनायें बढ़ी हैं। जिसका शिकार कुछ भारतीय परिवार भी हुये हैं। ऐसी घटनायें अब ब्रिटेन में भी शुरू हुई हैं और वहां भी बदलाव आ रहे हैं।

1950 के बाद से अमेरिका भारतीयों और विशेषतः भारत के श्रेष्ठ वर्ग का प्रिय देश रहा है। भले ही देश की सरकार और अमेरिकन सरकार में वैचारिक फर्क रहा हो परंतु वहां की तरक्की, सिस्टम, व्यवस्था की चर्चा भारतीय उच्च, उच्च मध्यम परिवारों में आम थी। पिछले दशकों में बहुत से भारतीय अमेरिकी नागरिक बने और वहीं बस गये। उस समय भारत के बुद्धिजीवी इसका तर्क देते थे कि यह ब्रेन ड्रेन हो रहा है क्योंकि भारत में योग्यता की वह कीमत नहीं मिलती जो अमेरिका में मिलती है। यह भी गर्व करते थे कि अमेरिका के वैज्ञानिक खोजों के पीछे भारतीयों का बौद्धिक योगदान है। स्वतः हर गोविन्द लाल खुराना जिन्होंने जीन्स की खोज की थी, उनका उद्धृत किया जाता था। नासा में काम करने वाले वैज्ञानिकों का उल्लेख किया जाता था परंतु अब परिस्थितियां बदल चुकी हैं। अब अमेरिका में वीजा लेने के लिये या नागरिकता लेने के लिये अप्रवासियों से पैसा वसूला जा रहा है। जिस व्यक्ति को वहां की नागरिकता चाहिये उसको योग्यता के आधार पर प्रवेश नहीं है बल्कि धन और पूँजी के आधार पर प्रवेश मिलेगा। ऐसी स्थिति यूरोप के सभी देशों में बन रही है और यह स्वाभाविक ही है क्योंकि अब उन देशों में आबादी बढ़ी है, बेरोजगारी बढ़ी है। बहुत संभव है इन्हीं परिस्थितियों के दबाव में भारत सरकार ने यह नई नीति बनाई है जो कि उनके घोषित स्वदेशी नारे के खिलाफ है। एक तरफ भारत सरकार व उनके नियंत्रक कहते हैं कि हम विश्व गुरु हैं और दूसरी तरफ भारत के छात्रों को पढ़ाने के लिये विदेशी गुरु आयेंगे। पर हमारे देश में इन बातों पर कोई प्रश्न नहीं उठाता, क्योंकि सब चलता है, यह संस्कृति उभर रही, पर इनके पीछे अंदरूनी कारण कुछ और है।

अब सरकार से यह पूछा जा रहा है कि जो विवि देश में आ रहे हैं इनका पाठयक्रम कौन तय करेगा? जाहिर है कि इन विदेशी विवि के जो पाठयक्रम वहां के हैं, वही चलेंगे। एक तरफ यही सत्ताधीश कहते हैं कि अंग्रेज के लार्ड मैकाले ने भारतीय शिक्षा

को नष्ट किया है और अपने लिये बाबू तैयार करने के लिये शिक्षा का ढाँचा बनाया। दूसरी तरफ अब यही लोग लार्ड मैकाले को, विदेशी शिक्षा को वापिस भारत ला रहे हैं। भारतीय शिक्षा की स्थिति यह है कि भारत का एक भी विवि विश्व की गणना में शीर्ष में शामिल नहीं हो पाता।

इसके अलावा जो दो अन्य तर्क दिये गये हैं उनकी पड़ताल जरूरी है। एक सरकारी अनुमान के अनुसार लगभग 5.50 लाख विद्यार्थी भारत में ही विधिवत शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे और बाहर रहने किराये आदि या खर्च आदि में लाखों रूपया बचेगा। मुझे इस आंकड़े पर कोई आपत्ति नहीं है परंतु दूसरा पहलू देश जानना चाहेगा कि जो यह विवि यहां आ रहे हैं उन्हें इससे कितना लाभ होगा? अगर एक विद्यार्थी की फीस तीन-चार वर्षों में साल के 10 लाख रूपये के हिसाब से मान लिया जाये जो कि कम ही है तो एक वर्ष में इन विद्यार्थियों की फीस से न्यूनतम 5 लाख करोड़ बच जायेगा और चार वर्ष में 20 लाख करोड़ रूपया विदेशों में फीस के रूप में जायेगा। यह आंकड़ा भी मैंने मात्र 10 लाख रूपया प्रतिवर्ष की फीस पर जोड़ा है। हालांकि अलग-अलग विवि के अलग-अलग रेट हैं। कुछ विवि की फीस तो साल में करोड़ों रूपयों की है। दूसरे ये जो विद्यार्थी जहां पात्र होंगे, इनमें से जो विदेशी सरकारों के जरूरत के होंगे वे, उन्हें ही वे ले जायेंगे, बकाया भारत में ही अपने रोजगार की संभावना तलाशेंगे। भारतीय लोगों का विदेशों में काम करने का या बड़ी नौकरी करने का प्रतिशत मुश्किल से 20 प्रतिशत रह जायेगा। 80 प्रतिशत नौजवान याने लगभग 04 लाख नौजवान भारत में ही रहकर नौकरी की तलाश करेंगे। उनकी जीवनशैली, मानसिक और जरूरतों के हिसाब से कितनों को भारत में रोजगार मिल पायेंगे, यह भी एक सवाल है? एक तर्क यह भी दिया जा रहा है कि तकनीकी अध्ययन व ज्ञान के लिये छात्र विदेशी संस्थाओं के क्लाउड का इस्तेमाल कर सकेंगे, और इसका दूसरा पहलू यह भी है कि उस तकनीक की खोज और उसका ज्ञान इन्हें उस रूप में नहीं हो सकेगा, बल्कि एक प्रकार से निर्भरता स्थाई रूप से पैदा होगी।

पाश्चात्य या विदेशी संस्कृति को अभी ये भारतीय छात्र बाहर जाकर देखते और सीखते थे अब देश में ही बन रहे इन विदेशी टापुओं में ये लाखों छात्र जब विदेशी जीवनशैली, मानसिक संस्कार और भाषा पर निर्भर होंगे तब वे भारत के आम मानस को उसी दिशा में ले जाने के लिये प्रेरित करेंगे। अभी तक जो 5.50 लाख विद्यार्थी बाहर पढ़ने जाते थे वे 4-5 साल तक उस विदेशी वातावरण में रहते थे परंतु देश में लौटने के बाद वे अपने मूल को पुनरू यादकर उससे जुड़ने का प्रयास करते थे।

अब हो सकता कि 5.50 लाख छात्र अपने देश के याने भारतीय छात्रों जो अन्य विवि या कालेज में पढ़ रहे को उस जीवनशैली के लिये आकर्षण का केंद्र बन जाये और देश में विदेशी मानसिकता और जीवनशैली को प्रभावित करें। स्वाभाविक है कि जिन परिवारों के बच्चे होंगे, उनके परिवार भी इनसे प्रभावित होंगे।

इसका प्रभाव भारतीय राजनीति पर भी अनेक रूप से पड़ेगा। अभी जो छात्र विदेशों से पढ़कर आये हैं वे देश की राजनीति को विदेशी राजनीति के पैमाने से देखते हैं उनके विदेशों में राजनैतिक प्रचार, राजनीति दृष्टिकोण और सोचने के तरीके बदलेंगे। जो भारत वसुधैव कुटुम्बकम की सोच पर, समरसता चाहता है। गरीब-अमीर के भेद को मिटाना चाहता है और अभी तक भारतीय राजनीति के चुनाव के आधार इस आधार पर होते रहे हैं वे मापदंड बदले जा सकते हैं। और मैं, केवल अपने लिये, अपने निजी परिवार के लिये, इस दृष्टिकोण पर जा सकते हैं। विषमता को मिटाना और समता का समाज बनाना आदर्श लक्ष्य होना चाहिये वह पूँजीवादी सोच में बदल सकता है। हम अपने वर्ग के लिए जिसे सिविल सोसायटी और सेलिब्रिटी तक ही देखा जाता है संवेदनायें व मानवीय पीड़ायें यही तक सिमट सकती हैं। पहले ही देश में लाखों की संख्या में विदेशी फंडिंग प्राप्त एनजीओ कार्यरत हैं जो भारतीय राजनीति को विचारधारा से हटाकर केवल तात्कालिकता के सिद्धांत पर ले जाने के माध्यम बने हैं। हमारे देश में परंपरा रही है कि जो हमारी संस्कृति भी है कि भविष्य में पानी की आवश्यकता पड़ेगी इसलिये पहले कुआं व बावड़ी तैयार करो परंतु विदेशी पूंजीवादी विचारधारा का कहना है कि पहले कुआं खोदने की आवश्यकता नहीं है। जब प्यास लगेगी तब खोदेंगे। और यह पाश्चात्य दर्शन, देश, प्रकृति और मानवता के बुनियादी मूल्यों को नष्ट करने वाला है। आज एआई, चौट जीपीटी और कितने ही नये माध्यम आये हैं सेशल मीडिया पर, फेसबुक, वाटसअप से आगे बढ़कर एक्स और इंस्टाग्राम पर पहुंचे हैं। इन सबसे देश में एक बड़े झूठ का पहाड़ खड़ा हो रहा है। तकनीक का इस्तेमाल मानवता के लिये हो यह तो स्वीकार है मगर तकनीक इंसान बनने लगे, इंसान को वैचारिक रूप से शैतान और हैवान बनाने लगे, रोजगारों को मिटाकर बेरोजगारी की फसल पैदा करने लगे, देश की पूंजी विदेश में जाने लगे तो ऐसी तकनीक व ऐसा विकास न केवल अत्याज्य है बल्कि एक अर्थ में राष्ट्रीय अपराध और धार्मिक दृष्टिकोण में पाप के समान है। क्या कभी सरकारें, देश अपने शिक्षा के नये खोल रही विदेशी दुकानों को इन कसौटियों पर कसेगी?

क्या महाराष्ट्र का त्रिपक्षीय सामंजस्य करार नया मॉडल बनेगा वैश्विक स्वास्थ्य क्रांति का नया अध्याय?

किशन भावनानी

21वीं सदी में चिकित्सा विज्ञान ने ऐसी ऊँचाइयाँ हासिल कर ली हैं, जिनकी कल्पना कुछ दशक पहले तक असंभव मानी जाती थी। जटिल सर्जरी, अत्याधुनिक कैंसर उपचार, अंग प्रत्यारोपण रोबोटिक तकनीक और जीवनरक्षक दवाओं ने करोड़ों लोगों के जीवन को नई उम्मीद दी है। लेकिन इस वैज्ञानिक उपलब्धि के समानांतर एक गंभीर मानवीय प्रश्न आज भी पूरी दुनियाँ के सामने खड़ा है, क्या इलाज उपलब्ध होने मात्र से स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित हो जाती है? यदि किसी गरीब परिवार को अस्पताल में उपचार तो मिल जाए, लेकिन इलाज के दौरान रहने, भोजन, परिवहन, कागजी प्रक्रिया और देखभाल के खर्च के कारण वह कर्ज में डूब जाए, तो क्या इसे पूर्ण स्वास्थ्य न्याय कहा जा सकता है? यही वह बिंदु है जहां महाराष्ट्र में मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस के निर्देश पर प्रस्तावित सरकार, धर्मादाय/निजी अस्पतालों और स्वयंसेवी संस्थाओं के बीच त्रिपक्षीय सामंजस्य करार का विचार महत्वपूर्ण हो जाता है। यह पहल केवल चिकित्सा खर्च को कम करने की अवधारणा नहीं है, बल्कि मरीज के साथ आने वाले परिवार की सामाजिक, आर्थिक और मानवीय सुरक्षा को स्वास्थ्य व्यवस्था का हिस्सा मानने की दिशा में एक महत्वपूर्ण सोच प्रस्तुत करती है। इस मॉडल को भारत के हर राज्य केंद्र शासित प्रदेश ही नहीं दुनिया के हर देश ने अपनाना चाहिए क्योंकि विश्व स्तर पर स्वास्थ्य व्यवस्था की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक स्वास्थ्य सेवाओं पर होने वाला निजी खर्च है। गरीब और निम्न-मध्यम आय वाले परिवारों के लिए गंभीर बीमारी केवल चिकित्सकीय संकट नहीं होती; वह आर्थिक संकट भी बन जाती है। किसी मरीज को कैंसर, ह्रदय रोग, किडनी की गंभीर बीमारी या किसी जटिल सर्जरी के लिए महानगर में जाना पड़े, तो अस्पताल का बिल केवल समस्या का एक हिस्सा

होता है। परिवार को कई सप्ताह या महीनों तक किराये का कमरा, भोजन, स्थानीय परिवहन, जांचों के लिए आवाजाही और अन्य आवश्यकताओं पर खर्च करना पड़ सकता है। ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों से आने वाले परिवारों के लिए यह बोझ और भी गंभीर हो जाता है। अनेक मामलों में मरीज के इलाज की व्यवस्था किसी सरकारी योजना या अस्पताल की रियायत से हो जाती है, लेकिन तीमारदारों की बुनियादी जरूरतें अनदेखी रह जाती हैं। यही वह खाली स्थान है जिसे महाराष्ट्र का त्रिपक्षीय मॉडल भरने की सटीकता से कोशिश करता है।अगर हम इस मॉडल को समझने की करें तो इस मॉडल की मूल शक्ति इसकी त्रिपक्षीय संरचना में है। पहला स्तंभ राज्य सरकार है, जो नीति, वित्तीय सहायता, डिजिटल सत्यापन, निगरानी और जवाबदेही का ढांचा तैयार करती है।मुख्यमंत्री वैद्यकीय सहाय्यता कक्ष जैसे तंत्र का उद्देश्य जरूरतमंद मरीजों को सरकारी चिकित्सा सहायता तक पहुंचाने में मदद करना है। दूसरा स्तंभ धर्मादाय अथवा निजी अस्पताल हैं,जिनके पास विशेषज्ञ चिकित्सक, आधुनिक उपकरण, ऑपरेशन थिएटर, आईसीयू और जटिल उपचार की क्षमता उपलब्ध है। तीसरा और सबसे मानवीय स्तंभ स्वयंसेवी संस्थाएं तथा चैरिटेबल संगठन (एनजीओस) हैं, जो मरीज और उसके परिवार को अस्पताल के बाहर की उन जरूरतों से जोड़ सकते हैं जिन्हें पारंपरिक स्वास्थ्य व्यवस्था अक्सर नजरअंदाज कर देती है। इस प्रकार सरकार की नीति, अस्पताल की चिकित्सा क्षमता और नागरिक समाज की मानवीय संवेदना एक साझा व्यवस्था में जुड़ती है।

इस मॉडल का सबसे महत्वपूर्ण नवाचार यह है कि स्वास्थ्य सेवा को केवल अस्पताल के भीतर होने वाली चिकित्सा प्रक्रिया नहीं माना जाता।किसी गरीब परिवार के लिए अस्पताल तक पहुंचना ही एक चुनौती हो सकता है। महानगर में पहुंचने के बाद सही विभाग ढूंढना, डॉक्टर तक पहुंचना, सरकारी सहायता के दस्तावेज तैयार करना, जांचों की तारीख समझना, दवाओं की व्यवस्था करना और रहने-खाने की समस्या से निपटना अलग-अलग कठिनाइयां हैं। यदि एक पंजीकृत और जवाबदेह एनजीओस मरीज के परिवार के लिए हेल्थ नेविगेटर की भूमिका निभाए, तो वह परिवार को व्यवस्था के भीतर रास्ता दिखा सकता है। इस व्यवस्था में विश्राम गृह, कम लागत या मुफ्त भोजन, स्थानीय परिवहन संबंधी सहायता, दस्तावेजी मार्गदर्शन और मानसिक संबल जैसी सेवाएं शामिल की जा सकती हैं। इससे उपचार की वास्तविक पहुंच केवल कागज पर नहीं, बल्कि जमीन पर मजबूत हो सकती है।

इस मॉडल का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम धर्मादाय अस्पतालों और सामाजिक संसाधनों का बेहतर उपयोग है। भारत के अनेक हिस्सों में ऐसे अस्पताल और ट्रस्ट मौजूद हैं जिन्हें सार्वजनिक हित, धर्मादाय गतिविधियों या रियायती सरकारी सुविधाओं के आधार पर सामाजिक दायित्व निभाने होते हैं। यदि गरीब मरीजों के लिए निर्धारित सेवाओं की पारदर्शी निगरानी हो, डिजिटल रिकॉर्ड बनाए जाएं और पंजीकृत एनजीओस को सामाजिक ऑडिट तथा सहायता व्यवस्था में जिम्मेदार भूमिका दी जाए, तो उपलब्ध चिकित्सा संसाधनों का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से किया जा

सकता है। इसका अर्थ केवल अधिक मुफ्त बेड उपलब्ध कराना नहीं है; इसका अर्थ है कि जिस सामाजिक दायित्व के लिए संस्थागत सुविधाएं विकसित हुई हैं, उसका वास्तविक लाभ सही व्यक्ति तक पहुंचे।

तीसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र बिचौलियों और अनधिकृत दलालों की भूमिका को कम करना है। बड़े अस्पतालों के आसपास आने वाले ग्रामीण और आर्थिक रूप से कमजोर मरीज अक्सर जानकारी की कमी के कारण गलत लोगों के संपर्क में आ जाते हैं। उन्हें महंगी एम्बुलेंस, अनावश्यक जांच, संदिग्ध दवाओं अथवा गैर जरूरी सेवाओं के लिए भुगतान करना पड़ सकता है। यदि सरकारी सहायता, अस्पताल की सेवाएं और पंजीकृत एनजीओस की सहायता एक पारदर्शी डिजिटल प्रणाली से जुड़ी हों,तो मरीज के पास आधिकारिक जानकारी का विश्वसनीय स्रोत उपलब्ध होगा। इससे अनौपचारिक दलाली की गुंजाइश कम की जा सकती है। हालांकि यह तभी संभव होगा जब एनजीओस का चयन, वित्तीय पारदर्शिता शिकायत निवारण और स्वतंत्र ऑडिट भी उतनी ही मजबूती से लागू किए जाएं।

राष्ट्रीय स्तर पर इस मॉडल की उपयोगिता और भी व्यापक हो सकती है। भारत में आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना जैसी योजनाओं ने आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के लिए अस्पताल उपचार की वित्तीय सुरक्षा को मजबूत किया है। लेकिन चिकित्सा बीमा या सरकारी उपचार सहायता और परिवार की गैर चिकित्सकीय जरूरतें दो अलग-अलग प्रश्न हैं। इसलिए भविष्य की स्वास्थ्य नीति में उपचार खर्च के साथ पेशेंट एंड अटेंडेंट सपोर्ट सिस्टम को भी जोड़ा जा सकता है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, तमिलनाडु और अन्य राज्यों में यदि प्रमुख सरकारी, निजी और धर्मादाय अस्पतालों के साथ स्थानीय एनजीओस का सुव्यवस्थित नेटवर्क तैयार किया जाए, तो बड़े महानगरों की ओर होने वाले अनावश्यक मरीज पलायन को कम किया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध विशेषज्ञता का बेहतर उपयोग होगा और मरीजों को अपने राज्य में ही अधिक गरिमापूर्ण उपचार मिल सकेगा। यह मॉडल महानगरीय स्वास्थ्य संस्थानों पर दबाव कम करने की दिशा में भी उपयोगी हो सकता है।

भारत में कुछ राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों पर अत्यधिक मरीज भार रहता है। यदि राज्यों में क्षेत्रीय कैंसर केंद्र, कार्डियक संस्थान, मेडिकल कॉलेज और सक्षम धर्मादाय अस्पतालों को एकीकृत रेफरल नेटवर्क से जोड़ा जाए तथा मरीजों और तीमारदारों के लिए सहायता केंद्र विकसित किए जाएं, तो स्वास्थ्य सेवाओं का विकेंद्रीकरण संभव है। इससे मरीजों को केवल इसलिए हजारों

किलोमीटर दूर नहीं जाना पड़ेगा क्योंकि उनके स्थानीय स्वास्थ्य तंत्र में जानकारी और समन्वय की कमी है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी इस अवधारणा की संभावनाएं महत्वपूर्ण हैं। अमेरिका जैसी बीमा-प्रधान स्वास्थ्य व्यवस्था हो अथवा यूरोप की सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणालियां, गंभीर बीमारी की स्थिति में मरीज के परिवार पर अप्रत्यक्ष आर्थिक और सामाजिक दबाव कहीं न कहीं मौजूद रहता है। विकसित देशों में भी कैंसर उपचार के दौरान परिवार के सदस्य को नौकरी से छुट्टी लेनी पड़ सकती है, परिवहन और आवास की समस्या हो सकती है तथा दीर्घकालिक देखभाल के कारण मानसिक तनाव बढ़ सकता है। विकासशील देशों में यह संकट और अधिक गहरा है, जहां स्वास्थ्य खर्च के साथ परिवहन, भोजन और आवास की लागत परिवार को गरीबी की ओर धकेल सकती है। इसलिए सरकार, चिकित्सा संस्थान और नागरिक समाज के बीच औपचारिक साझेदारी की अवधारणा वैश्विक स्वास्थ्य नीति में उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

इस मॉडल के सामने चुनौतियां भी कम नहीं हैं। सबसे पहली चुनौती है, जवाबदेही। यदि सरकार, अस्पताल और एनजीओस तीनों जिम्मेदार हैं, तो किसी गलती की स्थिति में जिम्मेदारी स्पष्ट होनी चाहिए। दूसरी चुनौती है,एनजीओस का चयन। केवल पंजीकरण पर्याप्त नहीं; उनकी वित्तीय पारदर्शिता, कार्यक्षमता, मानव संसाधन और शिकायत निवारण प्रणाली की जांच जरूरी होगी। तीसरी चुनौती है, डिजिटल विभाजन। ग्रामीण और अशिक्षित मरीजों को केवल ऑनलाइन प्रणाली के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता, उन्हें भौतिक सहायता केंद्र भी उपलब्ध कराने होंगे। चौथी चुनौती है डेटा सुरक्षा और मरीज की गोपनीयता। स्वास्थ्य संबंधी संवेदनशील जानकारी को साझा करते समय मजबूत साइबर सुरक्षा और स्पष्ट सहमति व्यवस्था आवश्यक होगी। पांचवीं चुनौती यह है कि मुफ्त या रियायती सेवाओं की गुणवत्ता किसी भी परिस्थिति में कम नहीं होनी चाहिए। इसलिए महाराष्ट्र की पहल को यदि व्यापक नीति का रूप देना है तो केवल एमओयू पर हस्ताक्षर करना पर्याप्त नहीं होगा। इसके लिए स्पष्ट पात्रता मानदंड, डिजिटल सिंगल-विंडो प्रणाली, अस्पतालों की सेवा-क्षमता का सार्वजनिक डैशबोर्ड, एनजीओस की स्वतंत्र ऑडिट व्यवस्था, मरीज शिकायत निवारण तंत्र, हेल्पलाइन, सामाजिक प्रभाव का वार्षिक मूल्यांकन और परिणाम आधारित निगरानी आवश्यक होगी। सरकार को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि सहायता वास्तविक जरूरतमंद तक पहुंचे और किसी भी स्तर पर भ्रष्टाचार, पक्षपात या संसाधनों के दुरुपयोग की गुंजाइश न रहे।

शासन-प्रशासन के भरोसे ही क्यों? हर व्यक्ति को निभानी होगी अपने कर्तव्यों की जिम्मेदारी!

नीलेश वर्मा

आज हम आए दिन न्यूज़ चैनलों पर देखते हैं कि बेटी ने माता-पिता की हत्या की साजिश रची, पत्नी ने पति की हत्या कर दी, एक छोटे बच्चे ने मोबाइल न देने पर अपनी माँ को गोली मार दी, डेढ़ वर्ष के बच्चे को जमीन पर पटक-पटककर मौत के घाट उतार दिया, एक बालिका को बेचने के बाद 32 लोगों ने उसका बलात्कार किया, तो कहीं पिता की अश्लीकल हरकतों से परेशान किशोरी घर छोड़कर भागी। वहीं बीच-बीच में हम देखते हैं कि पर्यावरण का संतुलन निरंतर बिगड़ रहा है, भूमिगत जलस्तर गिरता जा रहा है, कहीं भीषण बाढ़ है, तो कहीं अकाल की स्थिति है, अचानक आग लगने से कई लोगों की मृत्यु हो जाती है, शोधों में पेयजल, खाद्य पदार्थों तथा माँ के दूध में विषैले तत्व पाए जा रहे हैं, कैंसर और पक्षाघात जैसी गंभीर बीमारियाँ अब सामान्य होती जा रही हैं तथा कुछ बीमारियों में तो दवाएँ भी लाइलाज सिद्ध होती जा रही हैं। यह सिलसिला यहीं नहीं रुकता है, अब देखने में आ रहा है कि पालतू जानवरों के व्यवहार में भी परिवर्तन आया है, वे आक्रामक और हिंसक होते जा रहे हैं, कहीं वे बच्चों को तो कहीं वयस्कों को नोचते-काटते हैं, यहाँ तक कि पूरा खा जाते हैं और जो लोग बच जाते हैं, वे रेबीज जैसी जानलेवा बीमारी के कारण कुछ ही महीनों में मृत्यु का शिकार हो जाते हैं। यह वह भयानक घटनाएं हैं जिनका संज्ञान सुप्रीम कोर्ट द्वारा लिया गया है और समय-समय पर जनहित में आदेश दिये गये हैं।

देश में घटित इन घटनाओं की भयानक खबरों से मन विचलित होता है, फिर हम आश्चर्य और दुख व्यक्त करते हुए कलयुग का प्रभाव है कहकर पुनः अपनी दिनचर्या में लग जाते हैं, क्योंकि यह अनिष्ट स्वयं के साथ नहीं हुआ है, यह दर्द हमारा नहीं है। हम यह चिंतन नहीं करते कि इन घटनाओं के पीछे की मूल जड़ क्या है? और यह स्वयं हमारे साथ भी हो सकता है। विषय-विद्वान भावी भयानक परिणामों से परिचित होने के बावजूद अपनी बात आमजन तक प्रभावी ढंग से नहीं पहुँचा पाते। इन ह्रदयविदारक घटनाओं के बाद हम पुलिस, प्रशासन और न्यायालय से परिवर्तन एवं न्याय की आशा करते हुए अगली घटना की प्रतीक्षा करने लगते हैं, लेकिन व्यक्तिगत स्तर पर हम अपनी महत्वाकांक्षाओं, संस्कारों, नैतिक मूल्यों, मानवीय गुणों तथा लालच की प्रवृत्ति पर विचार कर अपने कर्तव्यों की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाने का प्रयास कभी नहीं करते। समाज के प्रत्येक व्यक्ति के साथ ही पुलिस, वकील, न्यायाधीश, डॉक्टर, पत्रकार और प्रशासनिक अधिकारी अपने स्तर पर, जहाँ वह हैं, वहीं से दृढ़ता के साथ पूरी ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन करने का प्रयास करे, तो ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति अवश्य रोकी जा सकती है।

विगत कुछ वर्षों से परिवार के भीतर होने वाले अपराधों में चिंताजनक वृद्धि देखी

गई है। माता-पिता, पति-पत्नी, भाई-बहन और बच्चों के बीच विश्वास, संवाद और सम्मान का स्थान स्वार्थ, क्रोध, अहंकार और असहिष्णुता लेते जा रहे हैं। भौतिक सुख-सुविधाओं की दौड़ में परिवार साथ रहते हुए भी मानसिक रूप से दूर हो गए हैं। बच्चों के लिए माता-पिता के पास समय नहीं है और बुजुर्ग उपेक्षा का शिकार हो रहे हैं। हमें अब परिवार को केवल आर्थिक इकाई नहीं, बल्कि संस्कारों की प्रथम पाठशाला बनाना होगा। प्रतिदिन परिवार के सभी सदस्यों का कुछ समय साथ बैठना, संवाद करना, भोजन साथ करना, बच्चों को नैतिक शिक्षा देना, बड़ों का सम्मान और छोटों के प्रति स्नेह का वातावरण बनाना आवश्यक है। विद्यालयों, धार्मिक संस्थाओं और सामाजिक संगठनों को भी चरित्र निर्माण के अभियान चलाने चाहिए। कानून अपराध होने के बाद दंड दे सकता है, लेकिन संस्कार अपराध होने से पहले रोक सकते हैं।

मोबाइल और इंटरनेट ने जीवन को सरल बनाया है, लेकिन अनियंत्रित उपयोग ने बच्चों के मानसिक विकास पर गंभीर प्रभाव डाला है। हिंसक खेल, अश्लील सामग्री, सोशल मीडिया की लत और वास्तविक जीवन से दूरी बच्चों में चिड़चिड़ापन, आक्रामकता और असंवेदनशीलता बढ़ा रही है। माता-पिता स्वयं डिजिटल अनुशासन अपनाकर बच्चों के मोबाइल उपयोग की समय-सीमा तय करें और उनकी ऑनलाइन गतिविधियों पर निगरानी रखें। उन्हें खेल, पुस्तकें, संगीत, योग, ध्यान और सामाजिक गतिविधियों से जोड़ें। बच्चों को विद्यालयों में डिजिटल साक्षरता के साथ डिजिटल नैतिकता की भी शिक्षा दी जाये। महिलाओं और बच्चियों के साथ बलात्कार, मानव तस्करी, घरेलू हिंसा तथा अन्य अपराध समाज पर कलंक हैं। ऐसे अपराध सामाजिक सोच के पतन का संकेत हैं। बचपन से ही लड़कों को महिलाओं के सम्मान, समानता और संवेदनशील व्यवहार की शिक्षा दी जाए, क्योंकि उनकी सुरक्षा पूरे समाज की जिम्मेदारी है। तेजी से गहराते पर्यावरण संकट का प्रमुख कारण मानव की स्वार्थपूर्ण जीवनशैली है। अंधाधुंध वृक्षों की कटाई, प्रदूषण, प्लास्टिक का अत्यधिक उपयोग, जल का दुरुपयोग तथा प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन से बाढ़, सूखा, भीषण गर्मी और असामान्य वर्षा जैसी समस्याएँ

बढ़ रही हैं। प्रत्येक नागरिक अधिक से अधिक पौधे लगाए, उनकी देखभाल करे, वर्षा जल संचयन करे, प्लास्टिक का उपयोग कम करे, जल संरक्षण करे तथा स्वच्छता व हरित अभियान चलाए। प्रकृति के प्रति जिम्मेदारी प्रत्येक नागरिक की है।

भारत में कैंसर, ह्मदय रोग, मधुमेह, पक्षाघात तथा मानसिक रोग तेजी से बढ़ रहे हैं। प्रदूषित भोजन, रसायनों का अत्यधिक उपयोग, तनावपूर्ण जीवन, व्यायाम की कमी तथा असंतुलित खान-पान इसके प्रमुख कारण हैं। आज प्रत्येक व्यक्ति आलस्य त्यागकर योग, नियमित व्यायाम, संतुलित भोजन, नशामुक्त जीवन एवं समय-समय पर स्वास्थ्य परीक्षण को जीवन का हिस्सा बनाये, क्योंकि सरकार स्वास्थ्य सुविधाएँ दे सकती है, लेकिन स्वस्थ रहने का निर्णय व्यक्ति को स्वयं लेना होगा। जंगली एवं पालतू पशुओं का बदलता व्यवहार भी गंभीर चुनौती है। बढ़ते शहरीकरण, जंगलों की कटाई, भोजन की कमी तथा मानव की लापरवाही के कारण पशुओं का व्यवहार आक्रामक हो रहा है। वनों का संरक्षण, सुरक्षित आवास, नसबंदी अभियान, समय पर टीकाकरण तथा पशुओं के प्रति संवेदनशील व्यवहार आवश्यक है। आज समाज अपनी संवेदनशीलता खो रहा है। दुर्घटना या अपराध होने पर सहायता करने के बजाय लोग वीडियो बनाने में अधिक रूचि दिखाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मानवीय संवेदनाओं को पुनर्जीवित करना होगा। पड़ोस, मोहल्ला, ग्राम और नगर स्तर पर सामाजिक सहयोग की परंपरा को मजबूत किया जाए तथा रक्तदान, अंगदान, आपदा सहायता, वृद्ध सेवा और जरूरतमंदों की मदद जैसे कार्यों में समाज की भागीदारी बढ़ाई जाये।

समाज में घटने वाली घटनाओं के लिए केवल शासन-प्रशासन ही नहीं, नागरिक भी उत्तरदायी हैं। हर समस्या का समाधान सरकार से अपेक्षित करना उचित नहीं है। सरकार कानून बना सकती है, प्रशासन व्यवस्था लागू कर सकता है और न्यायालय न्याय दे सकता है, लेकिन समाज का चरित्र नागरिक ही बनाते हैं। यदि प्रत्येक व्यक्ति ईमानदारी, अनुशासन, कर भुगतान, स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण, महिला सम्मान, यातायात नियमों के पालन तथा सामाजिक उत्तरदायित्व को अपना कर्तव्य मान ले, तो देश की अधिकांश समस्याएँ स्वतः कम हो जाएँगी। बच्चों में प्रांरभ से ही महिला सम्मान, संस्कार और नैतिकता का बीज बोना होगा, जिससे युवावस्था में वह एक जिम्मेदार व चरित्रवान नागरिक बन सकें और तेजी से गर्त में जाते समाज को बचा सकें। इससे हमारी आने वाली पीढ़ियों को एक स्वस्थ, सुरक्षित तथा संस्कारित वातावरण मिलने के साथ ही अनेक सामाजिक समस्याओं का स्थायी समाधान प्रारंभ हो जाएगा।

क्रांति के भामाशाह अमरचंद बांठिया

विजया पाठक

भारत माता की आजादी के लिए हर जन ने अपनी तरह से मोर्चा थामा था, इसमें कई लोगों ने कारावास भोगा, तो कई फांसी पर झूले और कईयों ने अपने जीवन के श्रेष्ठ वर्ष स्वतंत्रता के लिए लड़ते-लड़ते न्यौछावर कर दिए। देश को गुलामी की जंजीर से मुक्त कराने के लिए हर कोई ललायित था। राजस्थान की भूमि राजपुतानी शौर्य के लिए पहचानी जाती रही है लेकिन यहाँ एक ऐसा रणबाँकुरा भी पैदा हुआ जिसने अपनी राष्ट्रभक्ति के बल पर इतिहास ही बदल डाला। बीकानेर में जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय में अमीरचंद बांठिया के घर जन्मे अमरचंद बांठिया ने यह साबित कर दिया कि देश की आन-बान और शान में हर जाति हर सम्प्रदाय के लोग मर मिटने को तैयार हैं।

भारत माता की आजादी के लिए हर जन ने अपनी तरह से मोर्चा थामा था, इसमें कई लोगों ने कारावास भोगा, तो कई फांसी पर झूले और कईयों ने अपने जीवन के श्रेष्ठ वर्ष स्वतंत्रता के लिए लड़ते-लड़ते न्यौछावर कर दिए। देश को गुलामी की जंजीर से मुक्त कराने के लिए हर कोई ललायित था।

राजस्थान की भूमि राजपुतानी शौर्य के लिए पहचानी जाती रही है लेकिन यहाँ एक ऐसा रणबाँकुरा भी पैदा हुआ जिसने अपनी राष्ट्रभक्ति के बल पर इतिहास ही बदल डाला। बीकानेर में जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय में अमीरचंद बांठिया के घर जन्मे अमरचंद बांठिया ने यह साबित कर दिया कि देश की आन-बान और शान में हर जाति हर सम्प्रदाय के लोग मर मिटने को तैयार हैं।

यद्यपि इतिहास में अमरचंद बांठिया के बारे में बहुत कम जानकारी मिलती है लेकिन जो भी है वह बहुत साहस भरी है। अमरचंद बांठिया के पिता अमीरचंद का पुश्तैनी व्यवसाय था। बीकानेर में वे यही किया करते थे, लेकिन दुर्भाग्य से कारोबार में घाटा हो गया। व्यवसाय की तलाश में अमीरचंद का परिवार भगवान श्री चिंतामणी पार्श्वनाथ की प्रतिमा के चल समारोह के साथ-साथ ग्वालियर आ पहुंचा। प्रतिमा की स्थापना हो जाने के बाद यह परिवार ग्वालियर (लश्कर) के सराफा बाजार में ही बस गया और अपना कारोबार शुरू कर दिया। अपनी धर्मनिष्ठा और अच्छे व्यवहार के कारण जल्दी ही यह परिवार सम्मानित लोगों में गिना जाने लगा।

अमरचंद भी अपने पिता की तरह सदचरित्र, संयमी, धर्मनिष्ठ और बेहद परिश्रमी थे। वे प्रतिदिन मंदिर में भगवान के दर्शन करने जाया करते थे। साधु, संत और फकीरों के साथ सत्संग करना उन्हें खूब अच्छा लगता था। यह सत्संग का ही असर था कि उनकी कीर्ति ग्वालियर रियासत के महाराज जीवाजीराव सिंधिया तक पहुंच गई थी। सिंधिया बांठिया जी से मिले बिना न रह सके। महाराज सिंधिया जब उनसे मिले तो इतने प्रभावित हुए कि अपने विशाल खजाने गंगाजली राजकोष का कोषाध्यक्ष बना दिया।

यह राजकोष तब लश्कर स्थित गोरखी भवन में हुआ करता था। बेशकीमती कोष के रखरखाव और लेन-देन के लिए महाराज को बांठिया जैसे ही ईमानदार और परिश्रमी व्यक्ति की जरूरत थी। बांठिया जी बड़ी लगन और सूझ-बूझ के साथ राजकोष का संचालन करने लगे। लेकिन इतनी व्यस्ततम दिनचर्या के बावजूद भी वे मंदिर जाना और साधु, संतों के साथ सत्संग में भाग लेना नहीं भूलते थे।

संत, फकीर घुमंतू प्रवृत्ति के होने के कारण अनेक गुप्त जानकारियां अपने पास

रखते थे। अंग्रेजी हुकूमत की जुल्मों की दास्तां सांधु-संत और फकीर अच्छी तरह जानते थे। साधु-सन्यासी अंग्रेजों के अत्याचारों की कहानी जब बांठिया जी को सुनाते तो अंग्रेजों के प्रति उनका मन क्रोध से भर उठता था। आम भारतीयों के प्रति इस प्रकार के अत्याचार होते देख वे व्याकुल हो उठते थे। एक दिन एक संन्यासी ने इन्हें बताया कि जब देशभक्त क्रांतिकारियों के बीच युद्ध छिड़ता है तो अंग्रेज भारतीय सेना को सबसे आगे खड़ा करते हैं ताकि वे सुरक्षित रहें। एक अन्य संन्यासी ने उन्हें एक घटना का जिक्र करते हुए बताया कि अंग्रेजों ने 700 भारतीयों को गोलियों से इसलिए भून दिया कि जलमार्ग से रंगून जाते समय उन्होंने बैलों की पीठ पर बैठने से इंकार कर दिया था। हिंदू धर्मग्रंथों के अनुसार बैल और गाय दोनों ही पूजनीय होते हैं और जिनकी वे पूजा करते हैं उनकी पीठ पर कैसे बैठ सकते हैं। यह उनके धर्म के खिलाफ था। इस बात का अमरचंद बांठिया पर गहरा प्रभाव पड़ा। वे मन ही मन विदेशी आक्रांताओं को अपनी मातृभूमि से खदेड़ने की सोचने लगे। मातृभूमि के लिए उनकी यह भक्ति दिन-ब-दिन गहरी होती जा रही थी। वे अवसर की तलाश करने लगे और फिर एक दिन यह मौका भी आया जब बांठिया जी को अपनी देशभक्ति की परीक्षा देनी थी।

अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ सन् 1857 की क्रांति ने देश की चारों दिशाओं में विप्लव की चिंगारी जला दी थी। आंदोलन में शामिल होने के लिए सुहागिनों ने अपने सुहाग की आहुति दे डाली। इधर मध्यप्रांत में विद्रोह ने विकराल रूप ले लिया था। झाँसी क्रांतिकारियों के लिए महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया था। झांसी रियासत पर कब्जा जमाने के लिए अंग्रेजी हुक्मरान ह्युरोज की अंग्रेज सेना तैयार थी। तब झांसी के स्वाभिमान की रक्षा करने के लिए झांसी की रानी लक्ष्मीबाई रणभूमि में कूद पड़ी। वे और उनके साथी तात्या टोपे, रावसाहब और मर्दन सिंह ने आपात बैठकें कर युद्ध की रणनीति बनाई। अपनी सेना का बाहुबल बढ़ाने के लिए ग्वालियर की ओर चल दी। उधर तात्याटोपे ग्वालियर पहले ही पहुंच चुके थे। उन्होंने अपनी कूटनीति और चतुराई के बल पर ग्वालियर रियासत की आधी सेना को अपने साथ मिला लिया। इसका लाभ रानी को युद्ध में मिला। ग्वालियर की सेना रानी की ओर से लड़ी। यह युद्ध रानी ने जीता। ग्वालियर पर रानी का कब्जा हो गया। महाराज सिंधिया अंग्रेज अफसर के साथ चले गए। इस युद्ध में विजय के लिए अनेक हाथ महारानी लक्ष्मीबाई के साथ थे। इन हाथों में दो हाथ ऐसे भी थे जो सेना के लिए जीवनदान बन गए थे। उस समय लड़ते-लड़ते सारी रसद सामग्री खत्म हो चुकी थी। कई महीनों से सैनिकों को वेतन

भी नहीं दिया गया। राशन की व्यवस्था न होने से रानी की सेना कमजोर पड़ने लगी।

यह ऐसी संकट की घड़ी थी जिसका तत्कालिक कोई हल नहीं था। तभी इस विषम परिस्थिति में ग्वालियर रियासत के अर्थकोष के सचिव अमरचंद बांठिया बुंदेलखंड के भामाशाह बनकर सामने आ गए। उन्होंने मातृभूमि की रक्षा करने को समर्पित सैनिकों और क्रांतिकारियों के लिए पूरा कोष खोल दिया। इस विपुल धनराशि से जैसा कि ग्वालियर रेजीडेंसी के रिकार्ड से स्पष्ट है, क्रांतिकारी सैनिकों के पांच-पांच महीने के रुके वेतन और भत्ते का भुगतान किया गया। राशन का प्रबंध किया गया और पुरस्कार राशियां भी बांटी गई। रिकार्ड अनुसार यह धन राशि अमरचंद बांठिया ने 5 जून 1858 को उपलब्ध करवाई। उन दिनों सरकारी कोष से धन निकालकर क्रांतिकारियों को देने का मतलब मौत को बुलावा देना था।

यह अमरचंद बांठिया की देशभक्ति ही थी कि यह जानते हुए भी कि उन्हें इसके बदले अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा तब भी वे बिना विचलित हुए क्रांतिकारी देशभक्तों की मदद करने के लिए तत्पर हो गए। समय पर मिली इस सहायता के कारण क्रांतिकारी और सैनिकों के हौंसले बुलंद हो गए थे और उनकी मदद के बल पर रानी लक्ष्मीबाई दुश्मनों से युद्ध जारी रखने में सफल हुई। उन्होंने रणभूमि में अंग्रेज सरकार के छक्के छुड़ा दिए।

विधि को कुछ और ही मंजूर था दुश्मन ने पीछे से घात लगाकर रानी पर वार कर दिया। घायल रानी वीरगति को प्राप्त हुई। इस गौरवमयी इतिहास के चार दिन बाद ही 22 जून 1858 को परम देशभक्त अमरचंद बांठिया को राजद्रोह के अपराध में सराफा बाजार में नीम के पेड़ से लटकाकर फाँसी दे दी गई। यह फाँसी ब्रिगेडियर नैपीयर द्वारा दी गई। फाँसी के बाद भी अंग्रेजों की क्रूरता को तसल्ली नहीं मिली। उन्होंने अमर शहीद अमरचंद बांठिया के मृत शरीर को तीन दिनों तक उसी पेड़ पर लटकाए रखा। यह चेतावनी के रूप में किया गया कार्य था ताकि भविष्य में फिर कोई अमरचंद बांठिया जैसा देशभक्त क्रांतिकारियों की मदद करने आगे न आए। महान था वह देशभक्त जो बिना किसी स्वार्थ के अपनी जान की बाजी लगाकर मदद करने आगे आया। जो जीवन भर अहिंसा के रास्ते पर चलकर चींटी को भी बचाता रहा वह देश की खातिर खुद हंसते-हंसते सूली पर चढ़ गया। ऐसे देशभक्तों पर इतिहास को गर्व है।

देश की खातिर मेरी दुनिया में यह लौकीर हो
हाथ में हो हथकड़ी और पांव में जंजीर हो
आँखों की खातिर तीर हो मिलती गले शमशीर हो
सूली मिले, फाँसी मिले और मौत दामनगीर हो

Ram Temple embezzlement: How the Dalitbahujan see it

Sushil Manav

Village Pali, Tehsil Phulpur, District Prayagraj, Uttar Pradesh. White and grey clouds scattered in the sky. It is about to rain, at least so it seems. A clutch of women is transplanting paddy seedlings in a puddled field. But instead of breaking into folk songs traditionally sung during sowing, or gossiping and joking, they are discussing a current politico-religious issue.

One of them says, "What a Kaliyug we are living in! Ram's wealth, his ornaments, cash everything has been looted in Ayodhya."

A middle-aged woman joins the conversation, recounting a gist of Ram's life. "Poor Ram! So unlucky he was. He could never be happy neither in life nor in death. He could neither enjoy the company of his wife nor of his children. Watching their children grow is something that gives immense pleasure to fathers. But he was deprived of it. His idol was first kept in a mosque, and then in a tent. And when finally he did get a grand temple, his wealth was looted."

This account of a conversation between Dalitbahujan women in a village in Uttar Pradesh is evidence enough that

"But who told you that?", another woman asks.

"No one needs to tell me anything. The mobile tells me everything."

"Did they break into the temple at night, or did they commit dacoity in broad daylight?"

"Sister, the thieves were not outsiders. Those who looted Ram's wealth were the very people responsible for protecting it."

"And Modi-Yogi are doing nothing?"

"What can they do? The thieves are from their own party."

Ayodhya's Ram Temple is back as a talking point. This time, though, the issue is the loot of the offerings made by the devotees at the temple. The Dalitbahujan were enthusiastic partners in the Ram Temple movement right from karsewa to the demolition of the Babri Masjid to the lighting of lamps in homes after the construction was over. But now they find that from jewellery to cash everything is being looted from the temple.

Ghanshyam Thateri, who runs a kitchenware shop in the Babuganj Market of Prayagraj, had collected donations for

the construction of the Ram Temple. He had gone around riding a bicycle, with an attached trolley carrying a pair of khadau (wooden footwear associated with Ram). He recalls how people turned emotional and even began crying. “Moved by their faith in the Lord, some women even donated their ornaments. Widows gave their mangalsutras. In some villages, for want of anything valuable to give, people donated their brass utensils.” He describes how all this was done secretively, because in the eyes of the government and the police, it was a crime. But they did it for the sake of Ram. Now that they have come to know that the offerings made to the Lord were siphoned off and that the purchase of land for the temple was a big scam, it has been a real slap in the face. They are feeling cheated and betrayed. “The situation now is that everyone who sought donations for the temple is being seen as a thief. People may not say anything to your face, but they do feel that we all

are crooks,” Ghanshyam says.

Gobbling up temple offerings has a long history

Amit Nishad of Katka Jhoonsi has given up his traditional occupation (boatman) and now earns a livelihood by fixing floor tiles. He has involved two boys from the neighbourhood in his work. Amit belongs to Gen Z. He was born after the Ram Temple Movement and the destruction of the Babri mosque in the early 1990s. But he has seen the temple coming up in Ayodhya. He was witness to the frenzy that marked the temple's inauguration, which, incidentally, was timed to draw maximum electoral advantage. He had lit five earthen lamps at his home on 22 January 2024. Ram's association with a member of his (Nishad) community is something he feels very proud about. “To whom do the offerings made at temples go? If it is a small temple, the pujari who looks after its affairs and performs puja keeps it. It is the source of his livelihood. Donations are sought for maintenance of the temple and for annual festivals held on its premises. Whatever is offered at Ayodhya's temple, does it go to Ram? No, not at all. If the temple had one pujari, he alone would have gobbled up everything. Now since it has a 15-member unofficially 17-member trust and hundreds of staff, all of them were apparently together devouring the offerings,” he says.

Amit says, “Had the offerings been small, there would have been no problem. All the staff would have made merry and no one would have noticed. But the problem was that the offerings were huge, very huge. Now, since the offerings were huge, these people devoured huge amounts of money. And when you devour too much whether it is food, or money you are bound to get indigestion. These people stole tons of money and divided it among themselves. For example, Lavkush Mishra, Avinash Shukla. Then there is Tinnu Yadav, working at the temple for a long time. A man drawing a salary of Rs 15,000 per month turns wealthy in just two years. So wealthy that he buys land in prime locations priced between Rs 25 lakh and Rs one crore. He pays lakhs just as registration charges. He builds a huge two-storied lavish house and purchases expensive cars. His clothes are expensive, his mobile phone is costly, even his shoes cost a lot. People around you notice this. But more importantly, your language changes, your attitude, your behaviour changes. And then you become an eyesore. The revelations have come about because of new entrants. One doesn't know for how long the old scoundrels had been stealing.”

As I hear what Amit has to say, a verse written by Raidas centuries back comes to mind.

Mandir bheetar murati baithee, pujari bahar chela re,
Laddu bhog chadhawati janta, murati ke dhing kela re
Pathhar murti kachhu nahin khati, khate bambhan chela re,
Janata lutati bambhan saare, prbahu ji dete na dhela re
Punya paap punarjanm ka, Bambhan dinha khela re
Swargm nark baikunth padharo, guru shisya ya chela re
Jitna daan devge jaise, waisa nikre tela re

(Inside the temple sits an idol and outside are the priest's disciples. The people make offerings, but the idol doesn't even get a banana. The stone idol eats nothing; it is the

priest and his disciples who consume everything. The priests loot the public, yet the Lord doesn't punish them. Sin, virtue, and rebirth all are illusions created by the Brahmins. They sell passes to heaven, hell, or Vaikuntha. Whatever you offer as a donation, you will reap a commensurate reward, they tell you)

Why the land scam was ignored

Deepti Patel, who is pursuing her graduation, asks why no action was taken when the land purchase scam was uncovered. "Had the land scam been probed seriously and action been taken against the accused Champat Rai and Anil Mishra, they could have not stayed on at the top positions in the trust and devoured the offerings for years," she says.

It might be mentioned here that in 2021, the land purchase scam had become the talk of the town. It was alleged that a nexus of senior administrative officers posted

in Ayodhya, ruling party leaders and local builders made benami land purchases (concealing the real owners) for a song, and then sold it to the temple trust at prices that were multiple times higher. The Aam Aadmi Party was at the forefront in demanding action in the matter. At that time, too, the issue was brushed under the carpet by forming an SIT.

Investigations by the SIT constituted for probing the offerings theft have revealed that employees drawing very low salaries owned lands worth crores. It is alleged that senior politicians, powerful bureaucrats and land mafia are the real owners of these properties. They have made benami purchases to evade taxes and dodge the law. The SIT is also examining the bainamas (sale deeds) of these properties to find out whether revenue officials and property dealers were in cahoots.

Loot of money, land began in early days of Ram Mandir Movement

Social worker Ram Kripal Yadav, who has been keeping a close eye on the Ram Temple movement since the 1980s, says that "theft is nothing new to the movement". Even in the 1990s, siphoning off the donations collected by invoking the Ram Temple was common enough. Disputes over sharing of the spoils had even led to murders. It was not that voices were not raised against the rampant malpractices. But the dissenting voices were suppressed. Mahant Lal Das was the first chief priest of the makeshift Ram Temple at the disputed structure. He had opposed seeking donations in the name of the temple, alleging that the Vishwa Hindu Parishad (VHP) had collected hundreds of crores of rupees by exploiting popular sentiments and used the money to construct huge buildings. He was removed as chief priest on the charge that he had usurped Rs 10 from the offerings made at the temple and was replaced by Satyendra Das. Mahant Lal Das was shot dead in 1993. His murderers are still at large.

More than half a dozen serious allegations of corruption and embezzlement related to the Ram Temple Movement have been levelled over the past 30-40 years. The Nirmohi Akhada was the first to allege misappropriation of funds, accusing the VHP and its associates of siphoning off more than Rs 1,400 crore. It was also alleged that the cash which the people donated, along with Ram Shilas (bricks with "Ram" etched on them], was not accounted for and was misused. Another allegation was that some VHP leaders usurped donations from the people in Ayodhya as well as the offerings made at the temple. In 2021, a scam in the land purchase came to light. Yet another allegation was that land belonging to the temple was illegally sold. There were also allegations of a prasad (food offered to idols) scam running into crores of rupees.

Temple integration programme

A Dalitbahujan professor at Allahabad University, who preferred anonymity out of fear for his job, said that besides financial irregularities, a wider conspiracy is also being hatched. He says, "Just see how many old temples have been demolished in Gujarat, Varanasi and Ayodhya. The Fakire Ram Temple, Sita Rasoi Temple and dozens of such historical temples were bulldozed in Ayodhya. The decentralized structure of temples in ancient cities was systematically destroyed and was replaced with integrated temple complexes. Then, these integrated temple complexes were handed over to trusts, controlled by their own men. This was done in Badrinath, Kashi, Ayodhya, Dwarka and numerous other places. Clusters of temples were replaced with single temple complexes. With small temples gone, all the offerings and donations began flowing into the integrated temples complexes. Besides Ram Mandir, many other integrated temple complexes have witnessed a big jump in the offerings. The offerings which normally were distributed among many temples became

concentrated in integrated temple complexes."

Extortion in the name of VIP darshan

A VIP Darshan programme on payment of a convenience fee was launched at the Ram Mandir. SIT probe revealed that Rs 25,000 was charged for VIP darshan. At the Vishwanath Temple in Kashi, an extra payment needs to be made for witnessing aarti. There are different charges for different time slots. At Badrinath Temple, a Mahindra Thar SUV is available to ferry you if you are ready to pay the charges. At this temple, too, a VIP darshan costs Rs 1,100. Those who can't pay are denied access. Some time ago, a video shot in front of the Kedarnath Temple went viral on social media. The video shows a sobbing woman relating that she had reached Kedarnath covering a distance of 23 km on foot. But those who had come on foot were not being allowed to have a darshan. Those buying VIP tickets were being allowed inside and also those who arrived on a helicopter. Those coming on foot could not hope for a darshan. The woman in the video could not have a proper darshan because she hadn't used a chopper to get there and hadn't paid the extra fee for darshan.

Just recall what happened at the Kumbh 2024-25 in Allahabad. A tent city was set up on the Arail Ghat. Those staying there were allowed to perform yagnas and pujas on the Arail VIP ghats even on the day of Mauni Amawasya (Black Moon, considered inauspicious). But the ordinary people could not even take a dip in the river (to wash off the inauspiciousness). They were forced to approach the ghats packed like sardines, and some even lost their lives. Many videos depicting this state of affairs had gone viral.

All major centres of pilgrimage are coming under the control of a particular organization and a particular ideology. The poor, and especially the Dalitbahujan, are being denied access to temples. This is a political conspiracy aimed at making these people feel inferior by keeping them away from their gods. In short, the RSS-BJP combine is not only depriving people of their places of worship but is also deciding who can enter temples and who can't.

Donations usurped in Vaishno Devi, Badrinath, Gujarat, Rajasthan temples, too

Even as the theft of offerings at Ram Mandir became public, a string of similar revelations came to the fore. It is being said that 20 tonnes of silver, costing around Rs 550 crore, offered at the Vaishno Devi shrine in Jammu was found to be fake. The offerings of silver made over several years were sent to a government mint for melting. However, it was found that only 5-6 per cent of the stock was real silver. It is a moot point whether the shopkeepers cheated the devotees by selling fake silver to them or they offered real silver but it was replaced with faux silver at the temple.

A similar case has been uncovered at the Badrinath temple. On 12 July 2026, a person called Pramod Nautiyal was arrested. He is the personal secretary to Hemant Dwivedi, the chairperson of the Badrinath-Kedarnath Temple Committee. He was arrested on the basis of a complaint made by Yuddhaveer Pushpvaan, an official at the temple, who was entrusted with the task of compiling a record of the offerings made at Badrinath. The Badrinath-Kedarnath Temple Committee, under the Uttarakhand government, manages and runs the Badrinath Temple.

It has also been revealed that Rs 22 crore was usurped from the offerings made at Rajasthan's Butati Mandir Dham. Records of gold and silver offerings made at the temple have disappeared, too. Also, CCTV footage showing theft of the offerings from Gujarat's Ambaji Temple has also emerged.

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान, भोपाल

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान वर्ष 1998 से सतत् रूप से संचालित हो रहा है। इस संस्थान से अध्ययन कर छात्र-छात्राएं प्रिंट व इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में अच्छे पदों पर पदस्थ हैं। साथ ही साथ शासकीय पद पर आसीन होकर इस संस्थान को गौरवान्वित कर रहे हैं।

: विषय :

मास्टर ऑफ आर्ट जर्नलिज्म (2 वर्ष)

बी.एस.सी. मास कम्यूनिकेशन (3 वर्ष)

प्रवेश प्रारंभ

संपर्क सूत्र

विजया पाठक (संचालक) - 9826064596

अर्चना शर्मा - 9754199671 संतोष गुप्ता - 9755618891

कार्यालय - कार्पोरेट कार्यालय - एफ 116/17, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

संस्थान - 28, सुरभि विहार कालोनी, कालीबाड़ी, बी.डी.ए. रोड, भेल, भोपाल, म.प्र.

R.O. No. 13772/27

उद्योग+गढ़ =
छत्तीसगढ़

हमारा लक्ष्य
इज ऑफ़ डूइंग बिजनेस

निवेशकों के लिए बेहतर माहौल और आधारभूत बुनियादी ढांचा

- विगत ढाई वर्षों में प्रदेश में **3,009** नई औद्योगिक इकाईयों की स्थापना
- **50,807** लोगों को प्रत्यक्ष रोजगार
- राज्य को 264 औद्योगिक परियोजनाओं से लगभग **8.22 लाख करोड़** रुपये के निवेश प्रस्ताव
- **154** परियोजनाएं निर्माणाधीन
- **1.72 लाख** से अधिक रोजगार सृजन की संभावना

इंजीनियरिंग एवं विनिर्माण | ऊर्जा एवं नवीकरणीय ऊर्जा | अधोसंरचना एवं लॉजिस्टिक्स | कृषि एवं फूड प्रोसेसिंग | आईटी एवं इलेक्ट्रॉनिक | स्वास्थ्य सेवा एवं फार्मा क्षेत्र

छत्तीसगढ़ जनसंपर्क
/ChhattisgarhCMO
/DPRChhattisgarh
www.dprcg.gov.in

सुशासन से समृद्धि की ओर

R.O. No. 13772/27